योगविद्या

वर्ष 8 अंक 4
अप्रैल 2019
सदस्यता डाकखर्च – रु100

बिहार योग विद्यालय, मुंगेर, बिहार, भारत

हरिः ॐ

योग विद्या का सम्पादन, मुद्रण और प्रकाशन स्वामी सत्यानन्द सरस्वती के संन्यासी शिष्यों द्वारा स्वास्थ्य लाभ, आनन्द और प्रकाश प्राप्ति के इच्छुक व्यक्तियों के लिए किया जाता है। इसमें बिहार योग विद्यालय, बिहार योग भारती, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट तथा योग शोध संस्थान के क्रियाकलापों की जानकारियाँ प्रकाशित की जाती हैं।

सम्पादक – स्वामी ज्ञानसिद्धि सरस्वती

योग विद्या मासिक पत्रिका है। देर से सदस्यता ग्रहण करने पर भी उस वर्ष के जनवरी से दिसम्बर तक के सभी अंक भेजे जाते हैं।

बिहार योग विद्यालय, गंगादर्शन, फोर्ट, मुंगेर, 811201, बिहार, द्वारा प्रकाशित।

थॉमसन प्रेस इण्डिया लिमिटेड, फरीदाबाद, 121007, हरियाणा में मुद्रित।

© Bihar School of Yoga 2019

पत्रिका की सदस्यता एक वर्ष के लिए पंजीकृत की जाती है। कृपया अपने आवेदन अथवा अन्य पत्राचार निम्नलिखित पते पर करें –

बिहार योग विद्यालय
गंगा दर्शन,
फोर्ट, मुंगेर, 811201
बिहार

✉ अन्य किसी जानकारी हेतु स्वयं का पता लिखा और डाक टिकट लगा हुआ लिफाफा भेजें, जिसके बिना उत्तर नहीं दिया जायेगा।

कुल पृष्ठ संख्या : 58 *(कवर पृष्ठों सहित)*

कवर : मुंगेर योग संगोष्ठी 2018

अन्दर के रंगीन फोटो : 1-4: बसंत पंचमी महोत्सव 2019

आध्यात्मिक मार्गदर्शन

थोड़ा-सा मिलो, थोड़ा-सा हिलो।

हमेशा सतर्क रहो और बुरी संगति से दूर रहो। कुसंगति ही अध्यात्म और भक्ति में सबसे बड़ी बाधा है जो शुचिता, सत्य और करुणा जैसे सद्गुणों का ह्रास करती है। तथाकथित मित्र बेकार की गपशप में तुम्हारा समय बर्बाद करते हैं क्योंकि उन्हें समय के मूल्य का कोई अंदाज नहीं। जल्दी से ऋषिकेश जैसे किसी एकांतिक स्थान चले जाओ। तब तुम आध्यात्मिक पथ पर सुरक्षित रहोगे।

इस विश्व को अच्छे, स्वस्थ, मजबूत लड़के-लड़कियों की आवश्यकता है। अलग-अलग लोगों के लिए भिन्न-भिन्न प्रकार के व्यायाम उपयुक्त हैं। व्यायाम की आदर्श प्रणाली वह है जिसमें न्यूनतम ऊर्जा खर्च करके अधिकतम लाभ प्राप्त किया जा सके। योगासन एक ऐसी आदर्श प्रणाली है। यह सरल, सटीक, प्रभावशाली और गृह अभ्यास के लिए उपयुक्त है। यह सभी व्यायामों का सम्राट् है।

– श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती

बिहार योग विद्यालय, गंगादर्शन, फोर्ट, मुंगेर-811201, बिहार के लिए स्वामी ज्ञानभिक्षु सरस्वती द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित
मुद्रक – थॉमसन प्रेस इण्डिया लिमिटेड, 18/35 माइलस्टोन, दिल्ली मथुरा रोड, फरीदाबाद-121007, हरियाणा
स्वामित्व – बिहार योग विद्यालय **सम्पादक** – स्वामी ज्ञानसिद्धि सरस्वती

योगविद्या

वर्ष 8 अंक 4 अप्रैल 2019
(प्रकाशन का 57 वाँ वर्ष)

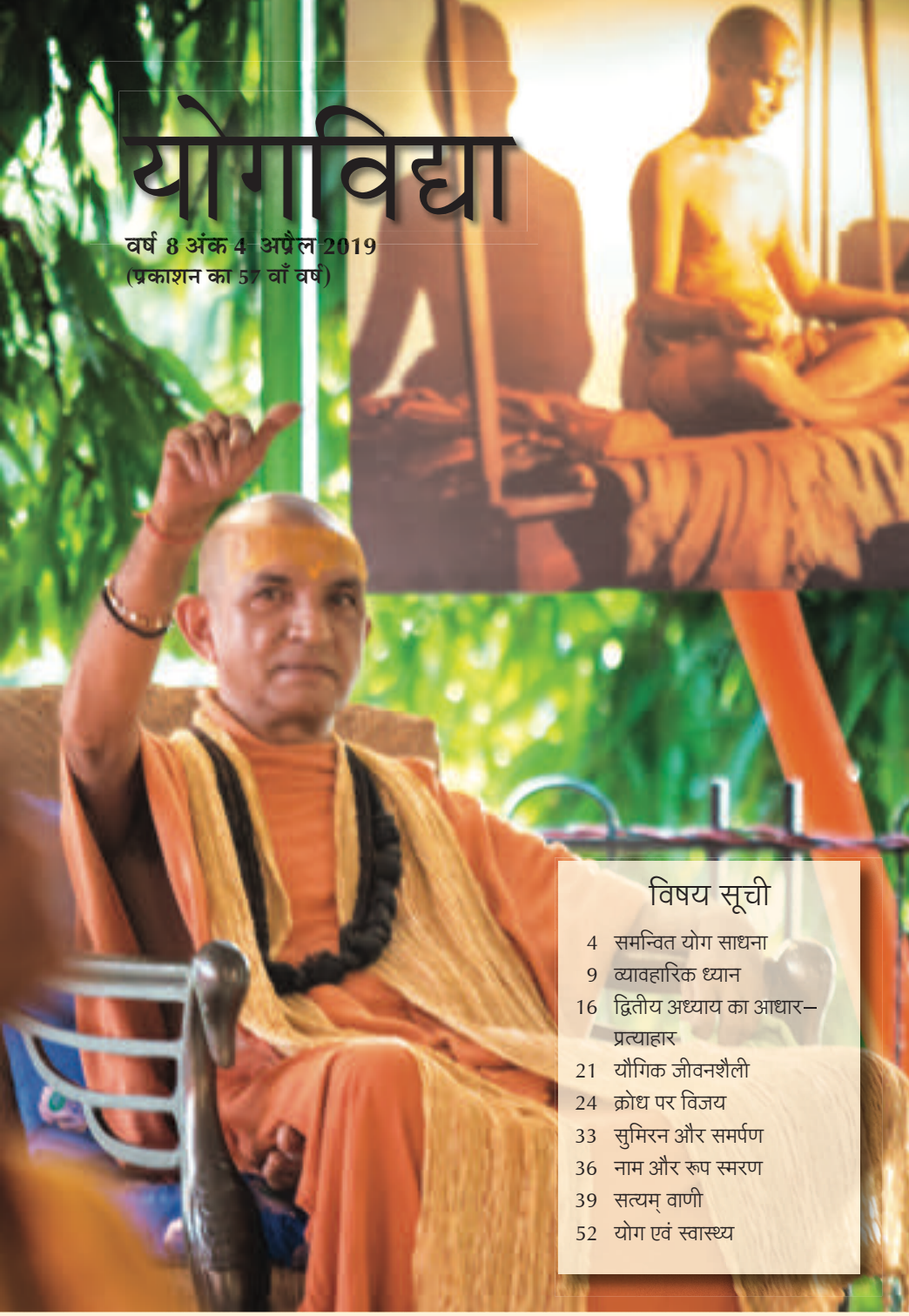

विषय सूची

4 समन्वित योग साधना
9 व्यावहारिक ध्यान
16 द्वितीय अध्याय का आधार– प्रत्याहार
21 यौगिक जीवनशैली
24 क्रोध पर विजय
33 सुमिरन और समर्पण
36 नाम और रूप स्मरण
39 सत्यम् वाणी
52 योग एवं स्वास्थ्य

तपस्विभ्योऽधिको योगी ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिकः। कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुन॥

समन्वित योग साधना

स्वामी शिवानन्द सरस्वती

विद्वत्तापूर्ण तर्क तथा शब्द-जाल से आप आत्म-साक्षात्कार प्राप्त नहीं कर सकते। समन्वित योग की साधना द्वारा आपको अपनी बुद्धि, भावना और कर्म का सर्वांगीण विकास करना होगा। तभी आप पूर्णता प्राप्त कर सकेंगे।

'अहं ब्रह्मास्मि' अथवा 'शिवोऽहम्' का जप करना आसान है, परन्तु उसका अनुभव करना बड़ा कठिन है। सभी प्राणियों से एकता स्थापित करना बड़ा मुश्किल है। निष्काम-सेवा, जप, कीर्त्तन तथा उपासना के द्वारा जब तक मन के मल दूर न हो जाएँ, समाधि की संभावना नहीं है। मन के विक्षिप्त रहने पर आप ब्रहा भावना कैसे कर सकते हैं? दत्तात्रेय तथा याज्ञवल्क्य जैसे महात्मा ही वास्तव में वेदान्त साधना के अधिकारी हैं। जो देह-चेतना से ऊपर उठ गए हैं वे ही अधिकारपूर्वक कह सकते हैं कि 'यह जगत् मृग-मरीचिका अथवा स्वप्न ही है।' आप सभी रोटी-दाल ही हैं। आप चौबीसों घण्टे अन्नमय कोश में ही रहते हैं। चाय में चीनी या दाल में नमक कम हो तो आप अशान्त हो जाते हैं। ऐसे में 'शिवोऽहम्', 'अहं ब्रह्मास्मि' या 'सोऽहम्' का जप करना तो व्यर्थ ही है।

आप कल्पना करते हैं कि आप तुरीयावस्था को प्राप्त कर चुके हैं। आप समझते हैं कि आपने शरीर चेतना का अतिक्रमण कर लिया है, परन्तु यदि व्यावहारिक जाँच की गई तो आप गहरी विफलता प्राप्त करेंगे। भगवान बुद्ध की भी जाँच हुई थी, उन्हें प्रलोभित किया था। अन्य सभी साधु-संतों की परीक्षा हुई थी। वे सभी परीक्षा में विजयी निकले। यम-नियम के अभ्यास द्वारा पहले दृढ़ नींव का निर्माण कर लीजिए। अथक निष्काम्य सेवा तथा उपासना के द्वारा हृदय के शुद्ध हो जाने पर ही वेदान्त की इमारत खड़ी की जा सकती है। ईश्वर की कृपा द्वारा ही मन में अवस्थित सूक्ष्म वृत्तियों का विनाश सम्भव है। व्यक्तिगत साधना द्वारा आप करोड़ों जन्मों में भी मन के मल को दूर नहीं कर सकते। जिस व्यक्ति को भगवान अपने चरणों में लाना चाहता है, उसे पूर्ण तथा मुक्त बना डालता है। यह कठोपनिषद् की घोषणा है।

मनुष्य अद्वैत दर्शन पर कई घण्टों तक भाषण दे सकता है, एक ही श्लोक की सैकड़ों प्रकार से व्याख्या कर सकता है। गीता के एक ही श्लोक पर वह सप्ताह तक भाषण दे सकता है, फिर भी उसमें रंचमात्र भक्ति या वेदान्त-साक्षात्कार नहीं हो सकता। यह सब शुष्क बौद्धिक व्यायाम है, उसके अतिरिक्त कुछ भी नहीं। वेदान्त तो जीवन्त अनुभव है। वेदान्ती को इसका विज्ञापन करने की आवश्यकता नहीं कि वह अद्वैती है। वेदान्तिक एकता की मधुर सुरभि सदा उससे निःसृत होती रहेगी। कोई भी व्यक्ति इसका अनुभव कर सकता है।

मन्दिर में किसी मूर्त्ति के समक्ष नमन करने में दम्भी वेदान्ती लज्जा का अनुभव करता है। वह सोचता है कि साष्टांग प्रणाम करने से उसका वेदान्तिक अनुभव वाष्पवत् विलीन हो जाएगा। अप्पर और सुन्दरर जैसे विख्यात तमिल संतों के जीवन-चरित्र को पढ़िए। उन्हें परम अद्वैत अनुभूति प्राप्त थी। वे सर्वत्र भगवान शिव के दर्शन करते थे। वे सभी शिव मन्दिरों में जाकर साष्टांग दण्डवत् प्रणाम करते थे। वे शिवजी की स्तुति करते थे। उनकी स्तुतियों का संग्रह आज भी पुस्तकों में उपलब्ध है। साठ नयनार सन्तों ने केवल चर्या तथा क्रिया का अभ्यास किया और साक्षात्कार प्राप्त कर लिया। वे मन्दिर के फर्श को साफ करते, फूलों का संग्रह करते, प्रभु के लिए माला बनाते तथा मन्दिर में दीप जलाते थे। उनके हृदय भक्ति से संतृप्त थे। वे कर्मयोग के मूर्त्तिमान स्वरूप थे। उन सबों ने समन्वित योग का अभ्यास किया। मन्दिर की मूर्त्ति उनके लिए चैतन्य-स्वरूप थी, वह प्रस्तर-खण्ड मात्र न थी।

चाय की आदत को भी दूर करना कितना कठिन है! यह तो कुछ ही वर्षों से बनी हुई है। यदि एक दिन आप चाय न लें तो कब्ज और सिर-दर्द की शिकायत करने लगते हैं। आप कोई भी काम-काज करने में समर्थ नहीं होते। कितने दुर्बल बन गये हैं आप! फिर मन में गहरी गड़ी कुवृत्तियों का उन्मूलन करना कितना कठिन होगा! उन वृत्तियों ने पुनरावृत्ति के द्वारा कितना बल प्राप्त कर लिया है। वेदान्त का वक्ता बनना आसान है। यदि आप कुछ वर्षों तक किसी पुस्तकालय में बैठकर अपने शब्दकोष और मुहावरों के भण्डार को बढ़ा लें तथा कुछ श्लोकों को याद कर लें तो आप सुन्दर भाषण दे सकेंगे। परन्तु किसी दुर्गुण को दूर करना उतना आसान नहीं है। सच्चा साधक ही इस कठिनाई को समझ सकता है।

आँखें बन्द कर लीजिए और जरा विचारिए, आपने अपने जीवन में कितने सत्कर्म किए हैं जिन्हें ईश्वर के लिए अर्पित किया जा सके तथा जो वास्तव में ईश्वर को प्रसन्न कर सकें। हो सकता है कि कोई भी निष्काम्य कर्म न हो। कर्म योग के अभ्यास के लिए अधिक धन की आवश्यकता नहीं है। मानव जाति की सेवा के लिए सिर्फ उदार हृदय की आवश्यकता है। यदि आप सड़क के किनारे किसी गरीब को पीड़ित देखें तो उसे अपनी पीठ पर बैठाकर अस्पताल में भर्ती करा दें। अपने पड़ोस के बीमार व्यक्ति की सेवा-सुश्रुषा करें। अस्पताल जाकर प्रेमपूर्ण हृदय से रोगी व्यक्तियों की सेवा करें। उनके स्वास्थ्य के लिए प्रार्थना करें। उनके सामने गीता का पाठ करें। इस प्रकार के कार्यों से आपका हृदय शुद्ध हो जाएगा तथा आप सभी प्राणियों में एकता का अनुभव करने लगेंगे। तब आप फूलों के साथ मुस्कुरायेंगे, वृक्षों, सरिताओं तथा पर्वतों के साथ बातें करेंगे। यदि आप निष्काम भाव से एक भी शुभ काम कर लें तो इससे आपका हृदय शुद्ध होगा तथा मन ईश्वर की ओर मुड़ेगा। आप ईश्वरीय ज्योति तथा कृपा की प्राप्ति के अधिकारी बन जाएँगे।

हृदय के मलों को दूर किए बिना बन्द कमरे में आँखें बन्द कर और पद्मासन लगाकर ध्यान करने से आप समाधि नहीं प्राप्त कर सकते। आप हवाई किले बनाने लगेंगे या आप तन्द्रा अवस्था में रहेंगे। नादान साधक इन अवस्थाओं को ही भ्रमवश समाधि मान बैठता है। यह भारी भूल है। यदि कोई व्यक्ति आधे घण्टे के लिए भी गम्भीरतापूर्वक ध्यान कर ले तो वह महान् योगी हो जाए। वह हजारों में शक्ति, आनन्द तथा शान्ति का संचार करने लगेगा।

सच्चा वेदान्ती, जो सब के साथ एकता का अनुभव करता है, अपने लिए एक प्याला दूध भी नहीं रख सकता। जो कुछ भी उसके पास है, उसमें वह दूसरों को भी हिस्सा देगा। पहले वह इसका पता लगा लेगा कि किसी बीमार आदमी को दूध की जरूरत तो नहीं है। वह दौड़ता हुआ वहाँ जाएगा तथा तुरन्त उसे दूध देगा और ऐसी सेवा में सुख का अनुभव करेगा। आजकल कुछ सेवा-निवृत्त लोग गंगा के तट पर निवास करते हैं। वे वेदान्त की कुछ पुस्तकें पढ़ लेते हैं तथा सोचते हैं कि अब जीवनमुक्त अवस्था प्राप्त हो गई है। वे अपने लिए ही धन व्यय करते हैं और शेष अपने पुत्रों के पास भेज देते हैं। उनके हृदय का विकास नहीं हुआ है। वे दूसरों के लिए सहानुभूति नहीं रखते। आध्यात्मिक मार्ग में उनकी रंचमात्र भी उन्नति नहीं हुई है, क्योंकि उनमें हृदय की विशालता या उदार वृत्ति नहीं है। वे उसी अवस्था में रहते हैं जिस अवस्था में वे पन्द्रह वर्ष पूर्व थे। यह खेद की बात है।

उन्हें एक वर्ष तक भिक्षा पर ही रहना चाहिए और अपनी सारी पेंशन से गरीबों की सेवा करनी चाहिए। वे एक वर्ष में ही आत्म-साक्षात्कार कर लेंगे। शीतकाल

में दो मास तक उन्हें निर्धन की भाँति भ्रमण करना चाहिए। वे नम्र, कारुणिक तथा अधिक उदार बन जाएँगे। उनमें इच्छाशक्ति तथा सहनशीलता का विकास होगा। अपने भ्रमणकाल में वे ईश्वरीय कृपा के रहस्यों को समझ पायेंगे। ईश्वर में उनकी श्रद्धा दृढ़ हो जाएगी। वे भूख की ज्वाला तथा कंपकंपाती ठण्ढ का अनुभव करेंगे। तब वे समझ सकेंगे कि गरीब लोगों को कितना कष्ट होता है। वे गरीबों को कम्बल बाँटेगे तथा भूखों को अन्न देंगे, क्योंकि उन्हें उनके दु:खों का ज्ञान रहेगा।

आप अपना समय गँवा रहे हैं। आप आत्मनिरीक्षण का अभ्यास नहीं करते। आप सबेरे उठकर चाय पीते हैं तथा अपने कार्यालय चले जाते हैं। आप क्लबों में जाते हैं, सायंकाल को गप्पें लगाते हैं, ताश खेलते हैं, सिनेमा जाते हैं और सबेरे आठ बजे तक खर्राटे लगाते रहते हैं। इस प्रकार आपके जीवन का अपव्यय ही हो रहा है। आप जप और ध्यान का अभ्यास नहीं कर रहे हैं। आप नहीं जानते कि कौन-सी वृत्ति आपको कष्ट दे रही है, कौन-सा गुण किसी विशेष समय में प्रधानता को प्राप्त है? आप मनोविज्ञान के बारे में कुछ भी नहीं जानते। आप ब्रह्म-विचार, आत्म-चिन्तन अथवा ब्रह्मनिष्ठा के विषय में भी कुछ नहीं जानते। आप महात्माओं का सत्संग नहीं करते। आपके जीवन का कुछ भी कार्यक्रम नहीं है। सेवा-निवृत्त होने के बाद भी आप कोई और नौकरी कर लेते हैं, क्योंकि आध्यात्मिक साधना में समय लगाने की कला आपको मालूम नहीं है। आपको मनन एवं विचार का ज्ञान ही नहीं है क्योंकि अपनी युवावस्था में आपने आध्यात्मिक अनुशासनों का पालन किया नहीं। आपने व्यर्थ ही जीवन बिताया है, केवल जेब तथा पेट भरने के लिए।

वेदान्तियों के लिए संकीर्त्तन बड़ा सहायक है। मन के थक जाने पर संकीर्त्तन उनमें नई स्फूर्ति तथा प्रेरणा भरेगा। संकीर्त्तन मन को आराम पहुँचाता, उन्नत करता तथा ध्यान के लिए तैयार करता है। जब मन ध्यान करने से उचट जाए तो संकीर्त्तन उसे पुन: लक्ष्य पर लगा देगा। जो ध्यान का अभ्यास करते हैं, वही इसे समझ सकते हैं।

क्या आप चौबीसों घण्टे ध्यान कर सकते हैं? निश्चय ही नहीं। तब आप चौबीस घण्टे किस तरह बिताने जा रहे हैं? ध्यान के नाम पर तामसिक न बन जाइए। जब मन भटकने लगे, जब एकाग्रता का अभ्यास कठिन हो जाए तो कमरे के बाहर निकल आइए तथा कुछ उपयोगी सेवा में निरत हो जाइए। सेवा करते समय भी ध्यान के प्रवाह को बनाए रखिए अथवा कुछ मानसिक जप करते रहिए। ध्यान आपको प्रसन्न, अन्तर्मुखी, चिन्तनशील, बलवान्, शान्त, स्फूर्तिमान् तथा प्रखर बनायेगा। यदि आप में इन गुणों का अभाव है तो निश्चय ही आपके ध्यान में कुछ कमी है। सम्भवत: आप सतत् ध्यान योग के अधिकारी नहीं हैं।

आपको ध्यान के साथ-साथ कर्म योग का समन्वय करना होगा। तभी आपकी प्रगति होगी।

पक्षी दो पंखों के बिना उड़ नहीं सकता। दो पंख होने पर भी यदि पूंछ न हो, तो वह उड़ नहीं सकता। पूंछ पक्षी को सन्तुलित रखती तथा उसकी सही दिशा को निर्धारित करती है। कर्म तथा ज्ञान को सन्तुलित रखने वाली पूंछ भक्ति है। दो पंख कर्म तथा ज्ञान हैं। ज्ञान, भक्ति तथा कर्म परिपूर्णता की प्राप्ति के लिए आवश्यक हैं। इनसे बुद्धि, भावना तथा कर्म का विकास होगा, तथा आप अपने लक्ष्य तक पहुंच सकेंगे।

भगवान कृष्ण समन्वय-योग में पारंगत हैं। वे सारथी हैं, वे राजनीतिज्ञ हैं, वे संगीत-सम्राट् हैं। वे रासलीला के निपुण नर्त्तक हैं। वे महान् धनुर्धर हैं। वे कहते हैं—'इन तीनों लोकों में ऐसी कोई भी चीज नहीं जो मेरा कर्त्तव्य हो। न कोई ऐसी वस्तु ही है जिसे मुझे प्राप्त करना है, फिर भी मैं कर्म में संलग्न रहता हूँ।' आदिगुरु शंकराचार्य, प्रभु ईसा मसीह, भगवान बुद्ध—ये सभी समन्वय-योग में निपुण थे।

ज्ञानयोग का मूल साधना-चतुष्टय में है। इसमें ब्रह्मज्ञान का फूल लगता है तथा मोक्ष या कैवल्य के फल की प्राप्ति होती है।

भक्ति का मूल श्रद्धा या आत्मार्पण में है। प्रेम का पुष्प खिलता है तथा ईश्वर-प्राप्ति या भाव-समाधि का फल लगता है।

राजयोग का मूल यम तथा नियम में है। एकाग्रचित्त का फूल लगता है तथा निर्विकल्प समाधि का फल लगता है।

कर्मयोग का मूल है आत्म-त्याग, चित्तशुद्धि तथा चित्त-विशालता हैं फूल और ब्रह्मज्ञान का फल लगता है।

सत्य तथा ब्रह्मचर्य कुण्डलिनी योग के मूल हैं। मातृ-शक्ति की कृपा फूल है तथा शिव-योग की प्राप्ति फल है।

आसन तथा प्राणायाम हठयोग के मूल हैं। विश्रान्ति फूल है तथा कायसम्पत, दीर्घायु एवं कुण्डलिनी-जागृति के फल लगते हैं।

व्यावहारिक ध्यान

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

हर एक व्यक्ति को दो चीज़ों को ध्यान में रखना चाहिए। पहला, नित्यप्रति पन्द्रह मिनट आसन करना चाहिए। बूढ़ों को भी करना चाहिए, बूढ़ों को तो बल्कि ज़रूर करना चाहिए। मैं तो अस्सी से ऊपर हूँ, सन् 1923 का मॉडल हूँ, पर अपना पन्द्रह मिनट आसन कर ही लेता हूँ। दूसरी चीज़ भूलना नहीं, रोज़ सवेरे और रात को कम-से-कम पाँच मिनट एकचित्त होकर अपने गुरुजी के द्वारा दिया हुआ मन्त्र जपना। मैंने पन्द्रह मिनट नहीं कहा, केवल पाँच मिनट कहा। अगर तुम कम करना चाहो, तो तीन भी कह सकता हूँ। मनमर्जी से मन्त्र नहीं जपना। मन्त्र गुरु-मुख होता है, मन-मुख नहीं।

मानसिक एकाग्रता

सब विद्याओं में गुरु की आवश्यकता है, डॉक्टरी, क्रिकेट और हॉकी के लिए भी गुरुजी चाहिए तो योगविद्या में भी गुरु की आवश्यकता क्यों नहीं? गुरु-मंत्र जपते समय अपने मन में यही सोचना चाहिए कि इतनी देर मैं दुनिया के बारे में न सोचूँ, एकाग्रचित्त रहूँ। यह आवश्यक बात बोल रहा हूँ यहाँ। मन्त्र ज़रूरी नहीं है, मन्त्र आधार है। असली चीज़ है मन को एकाग्र करना। मन को एकाग्र करने का मतलब होता है जीवन की 'मास्टर चाबी' अपने हाथ में लेना। चोर हो, बदमाश हो, सन्त हो, महात्मा हो, व्यापारी हो, बूढ़ा हो, सदाचारी हो, ब्रह्मचारी हो, व्यभिचारी हो, कोई फर्क नहीं पड़ता अगर चित्त थोड़ी देर के लिए शून्य में चला जाए। शून्य माने, जहाँ सांसारिक चेतना न रहे। और इस शून्य को तीन बार पाना पड़ता है, एक बार नहीं। यह जो अभी तुमको बता रहा हूँ, यह पहले शून्य की बात है। ॐ नमः शिवाय, ॐ नमः शिवाय, मन में और कुछ नहीं है, उसको कहते हैं प्रथम शून्य। कबीरदास कहते हैं कि जिस परम चीज़ को तुम पाना चाहते हो, वह तीन शून्य के पार है—*शून्य शून्य शून्य के पारा*। और इसी पर एक सन्त ने कहा है—*जागृत स्वप्न सुषुप्ति जानी, तुरीया तार मिलाया*—जाग्रत अवस्था में एक शून्य की प्राप्ति करो, स्वप्न अवस्था में दूसरे शून्य की प्राप्ति करो, सुषुप्ति अवस्था में तीसरे शून्य की प्राप्ति करो—ये तीन शून्य हैं। तब चौथी अवस्था आती है।

अब इसको और अच्छी तरह से समझाता हूँ। अभी तुम जिस अवस्था में हो—आँखें खुली हैं, दिमाग चल रहा है, दिमाग का सम्पर्क पाँच इन्द्रियों से हो रहा है, इस अवस्था को कहते हैं जाग्रत अवस्था। पाँच इन्द्रियाँ कौन-सी हैं? कान, त्वचा, आँख, जिह्वा और नाक। इनके पाँच विषय हैं—शब्द, स्पर्श, रूप, रस

और गंध। जब तक तुम लोगों को इन पाँच विषयों की जानकारी रहती है, उस अवस्था को कहते हैं जागृति। जागृति की इस अवस्था में इन पाँचों से थोड़ी देर के लिए पूरी तरह सम्बन्ध-विच्छेद करना पड़ता है। थोड़ी देर का मतलब पाँच मिनट बहुत हैं। बन्दूक की गोली ठीक लग जाए, तो एक काफी है। एक क्षण के लिए भी अगर तुम शून्य अवस्था में चले जाओ, तो गजब हो जाएगा, क्योंकि हमने सुना है हमारे अन्दर परमात्मा है।

इस घट अंतर बाग-बगीचे, इसी में सिरजनहारा ।
इस घट अंतर सात समुन्दर, इसी में नौ लख तारा ॥
इस घट अंतर पारस मोती, इसी में परखनहारा ।
इस घट अंतर अनहद गरजै, इसी में उठत फुहारा ॥
कहत कबीर सुनो भाई साधो, इसमें साईं हमारा ॥

वह दिखता तो कहीं नहीं है। डॉक्टर साहब देखते हैं तो कुछ दिखाई नहीं देता है—सरजनहारा नहीं दिखाई देता, सात समुन्दर भी नहीं दिखाई देते, हाँ, रक्त-मज्जा-हड्डियाँ दिखाई देती हैं। और यहाँ महात्मा कहता है कि इस घट भीतर नौ लख मोती, कोई पन्ना, कोई हीरा। इस घट भीतर सात समुन्दर, कोई मीठा, कोई खारा। इस घट भीतर बैठा है सरजनहारा। यह कबीर का वचन है। लेकिन आपको तो अन्दर कुछ दिखाई नहीं देता है। सवाल यह उठता है कि आपको क्यों दिखलायी नहीं देता। इसलिए दिखाई नहीं देता कि आपकी आँख नहीं है। बिना आँख के वस्तु नहीं दिखती, बिना बुद्धि के विचार नहीं दिखता। बिना सूक्ष्मदर्शी के कीटाणु नहीं दिखते।

हर वस्तु की जानकारी के लिए उसका सेंसर, उसका संवेदक होना चाहिए। संवेदक रेडियो तरंगों को पकड़ता है, लेसर किरणों को पकड़ता है, आणविक विकिरण को पकड़ता है, ये चीजें दिखायी तो नहीं देतीं। जो चीज़ दिखायी नहीं देती, परन्तु सन्त-महात्माओं ने कहा है कि है, और तुम बोलते हो नहीं है, इसका मतलब है कि तुम्हारे पास आँख नहीं है। उस आँख को खोलने के लिए एकाग्रता ही रास्ता है। उसी रास्ते से तुम अन्दर जा सकते हो। अन्दर जाने का कोई दूसरा रास्ता नहीं है। मंदिर उसका रास्ता नहीं है, मस्जिद उसका रास्ता नहीं है, गिरिजे उसके रास्ते नहीं हैं, बाइबिल उसका रास्ता नहीं है, गीता उसका रास्ता नहीं है, रामायण उसका रास्ता नहीं है। एक ही रास्ता है उसका—केवल एक क्षण के लिए एकाग्र हो जाओ।

चित्त की वृत्ति को बहुत देर एकाग्र नहीं करना। यह चेतावनी दे रहा हूँ तुम लोगों को, खतरे का संकेत। बहुत देर जो चित्त की वृत्ति को एकाग्र करने की कोशिश करते हैं, घण्टा-डेढ़ घण्टा, उनके मस्तिष्क में विषाद आना शुरू होता

है। इसलिए तुमने देखा होगा, जितने लड़के अच्छे नम्बर पर पास होते हैं, 90-95% लाते हैं, बहुत होशियार रहते हैं, सबकी खोपड़ी डूबी हुई रहती है, क्योंकि जो लड़का बहुत होशियार रहता है, उसकी चेतना की एकाग्रता उच्च होती है। एकाग्रता के लिए गुरुजी का बताया हुआ जो मन्त्र होता है, पाँच मिनट वाला, उतना ही करो।

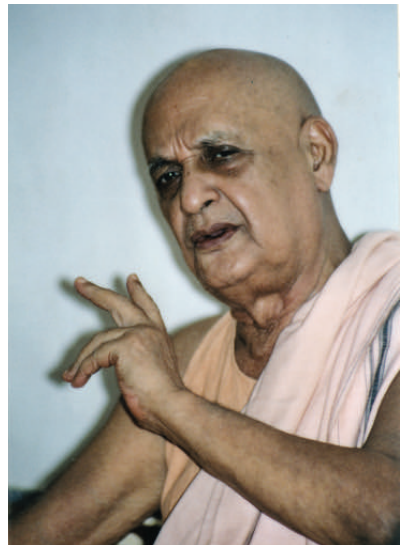

दिन में किसी भी समय ध्यान लगाने या एकाग्र होने का प्रयास मत करना। पद्मासन लगा लिया और बैठ गये। नहीं! क्योंकि जिस एकाग्रता की बात मैं कर रहा हूँ, उसका तीन जगह पर असर होता है। एक असर होता है पूरी शारीरिक प्रक्रिया पर। एन्जाइम, हॉर्मोन, डी.एन.ए, हृदय, फेफड़े, मस्तिष्क, इन सब पर इस प्रभाव को देखा गया है। हमारी किताबें पढ़ो। उनमें सब साफ लिखा है कि एकाग्रता का अभ्यास करने से शरीर के अन्दर क्या-क्या परिवर्तन होता है। दूसरा, मनुष्य की ग्रहणशीलता और प्रतिक्रियात्मक स्तर पर भी बहुत बड़ा फर्क पड़ता है। उसकी प्रतिक्रियायें और ग्रहणशीलता बहुत तेज होती है। और तीसरी चीज़, उसकी कार्यक्षमता।

स्वामी विवेकानन्दजी का क्या कार्य रहा! तीस-बत्तीस साल तक ज़िन्दा रहे। अठारह साल तक तो कालेज में ही पढ़ते रहे। कितने साल मिले उनको? दस-बारह साल मिले। पर कमाल कर दिया! क्योंकि उनके कार्य उच्च स्तर के थे। उनके विचार पक्के थे। उन्होंने अपनी योजना बिल्कुल ठीक बनाकर रखी थी। उनके पहले भी एक आदमी पैदा हुआ है, आज से अठारह-उन्नीस सौ साल पहले, आदि शंकराचार्य। आठ साल की उम्र में उन्होंने संन्यास लिया। आठ साल की उम्र में तो बच्चा दूध पीता है। आठ साल की कोई उम्र होती है संन्यास की! ऐसे ही स्वामी निरंजन चार साल की उम्र में मेरे पास संन्यास लेने के लिए आया था, और दस साल की उम्र में विदेश चला गया। यह असाधारण है।

आदि शंकराचार्य ने आठ साल की उम्र में संन्यास लिया और नर्मदा तट पर आए। गोविन्दपाद से उन्होंने दीक्षा ली और दीक्षा लेने के बाद वे कुछ समय वहाँ रहे। उसके बाद वे चले गए व्यास चट्टी और वहाँ उन्होंने श्रीमद्भगवद्गीता, ब्रह्मसूत्र और उपनिषदों पर सटीक भाष्य लिखे, जो आज दुनियाभर में उच्च साहित्य माने जाते हैं। दुनिया के किसी भी विश्वविद्यालय में चले जाइये, उन्हें सर्वश्रेष्ठ साहित्य

की श्रेणी में रखा गया है। ऐसा भाष्य किसी ने किसी विषय पर नहीं लिखा है। न बाइबल पर किसी ने भाष्य लिखा, न कुरान पर, न वेदों पर, न उपनिषदों पर। केवल एक आदमी ने ऐसा कार्य किया, जो मात्र सोलह साल का बच्चा था!

मनुष्य के स्थूल, सूक्ष्म और कारण शरीर

बात चल रही थी, चित्त की वृत्ति को थोड़ी देर के लिए गुरुजी के मंत्र को आधार बनाकर एकाग्र करने की। किसी धर्म, किसी आचार-विचार, किसी कर्म-काण्ड से कोई मतलब नहीं, केवल एक बात। मंत्र करते जाओ, एक साल, दो साल, तीन साल, चार साल, पाँच साल, दस साल। पन्द्रह-बीस साल तो एम.बी.बी.एस. डॉक्टर बनने में लगते हैं! अन्य विद्याओं में भी इतना समय लगता है। अगर पन्द्रह-बीस साल में अन्दर जाने का दरवाजा ही खुल जाए तो कितना बढ़िया!

एक बार अन्दर जाना सीखो, पर अन्दर जाना बहुत मुश्किल है। जब रात को तुम सपने में जाते हो तो क्या अपने सपनों को नियंत्रित कर सकते हो? जब तुम अपने विचारों को ही नियंत्रित नहीं कर सकते तो अपने सपनों को कैसे नियंत्रित कर पाओगे? जब तुम अपने स्थूल मन को ही नियंत्रित नहीं कर सकते, तो अपने सूक्ष्म मन को कैसे नियंत्रित करोगे?

मनुष्य के तीन आयाम या शरीर होते हैं—स्थूल, सूक्ष्म और कारण। जागृत, स्वप्न और सुषुप्ति, इनका सम्बन्ध स्थूल शरीर, सूक्ष्म शरीर और कारण शरीर से है। निद्रा की अवस्था में जीवात्मा कारण शरीर में चला जाता है। अब निद्रा पर भी तुम्हारा नियंत्रण नहीं है, स्वप्न पर भी तुम्हारा नियंत्रण नहीं है। गुस्सा नहीं करना चाहिए, मगर गुस्सा आ जाता है। इसलिए कि नियंत्रण नहीं है। जिस तरह लंगड़ा आदमी जानता है कि सीढ़ी पर चढ़ा जा सकता है, पर चढ़ नहीं सकता, उसी तरह से हम लोग जानते हैं कि क्रोध को नियंत्रित किया जा सकता है, मगर कर नहीं सकते। मन की जितनी वृत्तियाँ होती हैं, उन पर हमारा नियंत्रण नहीं है।

मैं एक ही विषय को घुमा-फिरा कर समझाने की कोशिश कर रहा हूँ। पाँच मिनट एक ही मन्त्र को जपो, बस। यह एकाग्रता जब तुमको प्राप्त हो जायेगी, तब तुमको अन्दर जाने का रास्ता मिलेगा। और जब अन्दर जाने का रास्ता मिलेगा, तब तुम्हारी कार्यक्षमता, तुम्हारी प्रतिक्रियाएँ बहुत हद तक सुधरेंगी, चाहे पढ़ने-लिखने में हो, या कहीं पर भी हो। दुनिया में बड़े-बड़े संगीत विशारद हुए हैं, बड़े-बड़े कलाकार हुए हैं। तुमने सुना होगा माइकलएंजेलो के बारे में। वेटिकन की छत में क्या बढ़िया चित्र बनाया है! वह सबेरे चढ़ जाता था पानी की बोतल लेकर, और वहाँ भाड़े पर लेट जाता था और बस चित्र बनाता जाता था। शाम को नीचे उतरता था। न टट्टी, न पेशाब, न भूख, न कुछ और। वह कौन सी चीज़ है? यह साधारण नहीं, असाधारण कार्य है।

केवल अध्यात्म मार्ग में नहीं, हर मार्ग में लगन की जरूरत होती है। अध्यात्म मार्ग तो ऐसा रास्ता है जिसपर चलकर तुम बहुत अच्छे संगीतज्ञ, एक अच्छे खिलाड़ी, एक अच्छे योगी, एक अच्छे प्रशासक, एक अच्छे कवि, एक अच्छे लेखक, एक अच्छे नेता और एक अच्छे बदमाश भी बन सकते हो। हाँ! दुनिया में अच्छे लोगों की ज़रूरत है और बदमाशों की भी। अगर एक दिन तुम्हारे पास जादू का मन्त्र आ जाए और दुनिया में जितने बदमाश हों, सब स्वाहा हो जायें तो दुनिया असंतुलित हो जाएगी। यह दुनिया सत्त्व, रज और तमो गुण पर कायम है। जितने बदमाश लोग हैं, सब तमोगुण प्रधान होते हैं। और जितने काम करने वाले होते हैं, ये नेता-कार्यकर्ता, सब रजोगुणी हैं। सत्त्वगुणी महात्मा तो कहीं हिमालय पर बैठता है या कहीं कमरे में, गौरी-गणेश में दिनभर बैठा रहता है। हाँ, हम सत्त्व गुण में हैं। हम रजो गुण में नहीं हैं। हम थे। तमो गुण में कभी थे ही नहीं। इस जीवन में यह एक कमी रह गयी, क्योंकि तमोगुण भी एक गुण है। रजोगुण में हम बहुत रहे, पर अब सत्त्वगुण में रहते हैं। इसीलिए इन चीज़ों को मैंने आपके सामने रखा, बहुत चीज़ें नहीं, केवल एक छोटी चीज़ पकड़ कर जाओ।

गुरु की आवश्यकता

गुरु है तो बहुत अच्छा, गुरु नहीं है, तो गुरु बनाने में शर्माओ मत, हिचको मत। 'गुरु धोखा देते हैं', ऐसा सोचकर चिन्ता मत करो। धोखा तो कोई भी किसी को देता है। गुरु बनाने में डरो मत, और गुरुजी से कभी कोई बुरा अनुभव भी हुआ,

तो भी चलेगा। आखिर शादी करके सबको अच्छा अनुभव हुआ है क्या? फिर भी तो सब किये ही जा रहे हैं। यह तो कोई बोलता नहीं कि शादी करने से तौबा! ऐसा ही सिद्धान्त गुरु के साथ भी लगा लो, गुरु बनाओ, धोखा खाओ। और जिस तरह से तकलीफ होने पर भी शादी ज़रूरी है, वैसे धोखा खाने पर भी गुरु ज़रूरी है।

आखिर हमने भी तो गुरु खोजा न! एक बार हम बरेली से सहारनपुर के रास्ते में एक ट्रेन में थे। हमने एक महात्मा से पूछा, 'गुरु कैसे खोजें?' उन्होंने कहा, 'समय बर्बाद मत कर, जो भी गुरु बनना चाहे, उसको गुरु बना लेना तू।' मैंने कहा, 'अगर धोखा दे दिया तो?' उन्होंने कहा, 'अगर गुरु धोखा दे, बड़ा अनुभव है। तुम धोखा मत देना उसको। एक दिन उसका ईनाम तुमको मिलने वाला है।' हम ऋषिकेश गए, सीधे स्वामी शिवानन्द जी के आश्रम पहुँचे। हमने कहा, 'शरणम्।' उन्होंने कहा, 'बैठ जाओ।' हमने कहा, 'हम आपके पास रहना चाहते हैं।' उन्होंने कहा, 'रहो।' हमने कहा, 'हमको आप ज्ञान दीजिये।' बोले, 'ज्ञान हम तुमको क्या देंगे बेटा, ज्ञान लेकर तो तुम आए हुए हो। ज्ञान तुम्हारे ही अन्दर है। ज्योत तुम्हारे ही अन्दर है। ईश्वर तुम्हारे ही अन्दर है। आत्मज्ञान तुम्हारे अन्दर है। समाधि तुम्हारे अन्दर है। सब तो तुम्हारे ही अन्दर है। तुमको क्या ढूँढना है? एक काम करो, आश्रम में रहो, जमकर काम करो। इतना काम करो, इतना काम करो कि रात को नींद, नींद नहीं समाधि बन जाए। और इसी थकान का नाम आनन्द है।' हमने ऐसे ही किया बारह साल तक। कितना काम किया ऋषिकेश में जाकर देखो, पूछो किसी से।

कहने का मतलब यह है कि गुरुजी बनाने में घाटा नहीं है। मैं तो सबको बोलता हूँ। अगर तुमको गुरु नहीं बनाना, तो मत बनाओ, पर फिर शादी भी मत करो। बुरे

अनुभव होने से भी तुम उस अनुभव की कारण-क्रिया का त्याग नहीं करते हो, सम्बन्धों का त्याग नहीं करते हो, अपनी परम्परा का त्याग नहीं करते हो, तो फिर इस परम्परा का त्याग किसलिए किया?

प्राचीनकाल में हम लोगों के यहाँ परम्परा थी। अब तो नाम की है। सात साल में उपनयन कराते थे, जनेऊ देते थे और गायत्री मन्त्र पढ़ाते थे। पर अब ऐसा नहीं है। अब ब्राह्मण करते हैं, पर वह भी केवल एक रीति-रिवाज की तरह हो गया है। उसका अर्थ ही नहीं रहा। वैसे तो आप लोगों में बहुत लोग शिष्य बने हुए हैं, उसमें कोई बड़ी

बात नहीं है, पर यदि आपका गुरु मन्त्र है, तो आज से पहला कार्य उसको नियम से एकाग्रतापूर्वक जपना शुरू कर दो। दिनभर खूब मौज करना, जहाँ जाना हो जाओ। आज से सोच लो कि रात को पाँच मिनट निकालना है। कितना भी तुम्हारा काम हो, कितनी भी तुम तकलीफ में हो, कितना भी तुमको बुखार हो, आखिर टट्टी-पेशाब, सब कुछ तो करते ही हो, तो इसको भी कर लिया करो।

गुरुजी ने मुझे जिस दिन मन्त्र दिया, कहा, 'पाँच माला जपना सबेरे और पाँच माला शाम को।' तो मैंने उनसे पूछा, 'सिर्फ पाँच माला।' उन्होंने कहा, 'हाँ।' मैंने कहा, 'बढ़ाना नहीं है क्या?' उन्होंने कहा, 'रोटी रोज़ बढ़ती जाती है क्या? आज तीन, तो कल चार, फिर पाँच, सात, आठ, नौ, दस, मरते दम तक पाँच सौ।' नहीं, भोजन का एक नियम होता है। आज तीन माला, अगले महीने में दस, फिर पचीस, फिर चालीस, तब तो ज़रूर अपच हो जाएगी। यह बात मान कर चलो। स्वामीजी ने कहा, 'नहीं, पाँच।' तब हमने कहा, 'स्वामीजी, फिर हमारी उन्नति कैसे होगी?' उन्होंने कहा, 'जो निशाना मारना जानता है, वह एक गोली मारे तो काफी है। जो निशाना मारना नहीं जानता, वह सौ गोलियाँ भी मारे तो कोई मरने वाला नहीं है। तुम सौ माला जपकर क्या करोगे?'

माला तो कर में फिरे, जीभ फिरे मुख मांहि।
मनुवा तो दस दिशि फिरे, ये तो सुमिरन नांहि॥

नहीं, ऐसा नहीं होना चाहिए। गुरुजी ने हमको पाँच माला कहा, पर बाद में मुझे मालूम चला कि पाँच माला कितना मुश्किल होता है। मैं बैठता था। एक माला के बाद मेरा मन डूब जाता था, माला गिर जाती थी, और मेरे को पता नहीं चलता था कि मैंने सुमेरु पार किया है कि नहीं। मेरी तरह अगर आप लोगों ने भी अनुभव किया हो कभी, या आगे कभी अनुभव करोगे, तो आप को पता नहीं चलेगा कि माला पूरी की या नहीं। मुझे याद नहीं है कि मैंने कभी पाँच माला पूरी की या नहीं। बीच में गिर जाती थी, फिर उठानी पड़ती थी, फिर सोचता था, कहाँ से शुरू करूँ। फिर पहले से शुरू करता था। फिर माला गिर जाती थी, क्योंकि जब मन एकाग्र होता है, तब इन्द्रियों का मन से सम्बन्ध कट जाता है। ऊँगली अपने आप खुलने लगती है और माला गिर जाती है। सच्ची बात है, आप मन लगाकरके देख लो। उस वक्त केवल मैं, और कुछ नहीं।

मैंने कभी पाँच माला की नहीं, और देखो मेरी उम्र हो गई, फिर भी पाँच ही माला चलती है। मैं पाँच माला के ऊपर जाना ही नहीं चाहता, क्योंकि गुरुजी बोलते थे कि अगर तुम पाँच माला ठीक से करोगे, तो पाँच माला की भी ज़रूरत नहीं है, केवल एक माला करोगे, तो एक माला की भी ज़रूरत नहीं है। और मेरे जीवन में ऐसा ही हुआ।

द्वितीय अध्याय का आधार–प्रत्याहार

स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

हमलोग इस मुंगेर योग संगोष्ठी में जिस प्रधान विषय को लेकर चले हैं वह है प्रत्याहार। इससे आप लोगों को यह संकेत मिलना चाहिये कि योग के पहले अध्याय में आसन-प्राणायाम-शुद्धिकरण आदि क्रियाओं पर ध्यान दिया गया जो शारीरिक अभ्यास हैं। मानसिक अभ्यासों को भी लोगों ने किया, लेकिन उतनी सजगता और तन्यमता के साथ नहीं जितना वे शारीरिक अभ्यासों को करते हैं। इसीलिये आज सबके लिये योग मात्र एक शारीरिक क्रिया ही बनकर रह गई है जिसे लोग केवल अपनी योग कक्षा तक सीमित रखते हैं।

योग के दूसरे अध्याय का प्रयोजन योग विद्या को आत्मसात् करने का है, और आत्मसात् करने की यह प्रक्रिया वास्तव में प्रत्याहार से ही शुरू होती है। प्रत्याहार के पहले तक आप आसनों के साथ, प्राणायामों के साथ, अन्य विधियों के साथ प्रयोग करते रहते हैं, पर गहराई में कभी जाते नहीं। न प्रत्याहार की गहराई में जाते हैं, न ध्यान की गहराई में जाते हैं, न योग निद्रा की गहराई में जाते हैं। निद्रा की गहराई में जरूर जाते हैं, पर योगनिद्रा की गहराई में नहीं जाते। अगर हमें योग की विद्या को आत्मसात् करना है और इसके वास्तविक लाभों को प्राप्त करना है, इसके मूल उद्देश्य को जानना है तो द्वितीय अध्याय में प्रवेश करना होगा जिसका मुख्य आधार प्रत्याहार है। अन्य आधार भी हैं, लेकिन इस संगोष्ठी में पहला आधार प्रत्याहार को बनाया गया है क्योंकि इसका सम्बन्ध रहता है सम्पूर्ण मन को व्यवस्थित करने से, प्राणों को व्यवस्थित करने से, इन्द्रियों को व्यवस्थित करने से। इन्द्रियाँ, प्राण और मन–इन तीनों को व्यवस्थित करने का कार्य प्रत्याहार करता है।

प्रत्याहार शब्द के दो अर्थ निकलते हैं। एक अर्थ निकलता है इसे प्रति+आहार समझने से और दूसरा अर्थ निकलता है प्रत्यय+हर के रूप में देखने से। दोनों परिभाषाएँ प्रासंगिक हैं। प्रति+आहार का तात्पर्य है कि जो चीज हमें बाहर से मिल रही है, उसे हम वापस करें। जो चिन्तायें-परेशानियाँ बाहर से आकर हमें प्रभावित कर रही हैं, हम अपने मन को उन चिन्ताओं और परेशानियों से मुक्त कर दें और उन्हें अपने से बाहर ढकेल दें। इसको कहते हैं प्रति+आहार, वापस करना। तुम हमें एक वस्तु देते हो, हम वह वस्तु तुम्हें पुन: देते हैं, यह है प्रत्याहार, वापस कर देना।

दूसरी परिभाषा है प्रत्यय+हर। प्रत्यय हमारे अनुभवों की वह छाप है जो हमारे मन में बीज रूप में पड़ जाती है। उसको भी जड़ से निकालने का प्रयास करना है। प्रत्ययों को जड़ से निकालने के लिये योग दर्शन में समझाया गया है कि पहले अपनी वृत्तियों को जानो। मन का जो स्वभाव, मन का जो मूड प्रकट हो रहा है

उसको पहले देखो, और उसे देख करके उसे व्यवस्थित करो, उसे सकारात्मक बनाओ। उसमें जो नकारात्मक दोष है उसे हटा दो। अगर हम इस प्रकार प्रत्ययों के दोषों को हटा देते हैं तो वास्तव में वह प्रत्याहार है।

प्रत्याहार के अभ्यास से ही मनुष्य शान्ति का अनुभव करता है, धारणा या ध्यान के अभ्यास से नहीं। ध्यान का प्रयोजन शान्ति प्रदान करना नहीं है, वह तो बहुत आगे की क्रिया है। अशान्ति कहाँ उत्पन्न होती है, चंचलता कहाँ उत्पन्न होती है? मन, बुद्धि और चित्त की ऊपरी सतह में। इस ऊपरी सतह के द्रष्टा बनकर जब हम इन प्रत्ययों का निर्मूलन कर देते हैं तो वृत्तियाँ शान्त हो जाती हैं, चंचलता समाप्त होती है और उसके बाद फिर हम ध्यान में प्रवेश कर पाते हैं। इसलिए अपने मन, इन्द्रियों और प्राणों को संभालने के लिये जो सर्वश्रेष्ठ विधि है वह है प्रत्याहार। यही हमलोगों को समझना है।

प्रत्याहार कितने प्रकार का होता है? प्रत्याहार के पूर्व दिनभर का कचड़ा, इन्द्रियों का कचड़ा, ज्ञानेन्द्रियों का कचड़ा, कर्मेन्द्रियों का कचड़ा, मन का कचड़ा, बुद्धि का कचड़ा, चित्त और अहंकार का कचड़ा, सब हमारे भीतर प्रवेश करते रहता है प्रतिपल, प्रतिक्षण। हमें समस्त इन्द्रियों का अनुभव हो रहा है और वह सब हम ग्रहण कर रहे हैं। तो सबसे पहले इन्द्रियों का जो अनुभव है, उसका द्रष्टा बनकर, साक्षी बनकर उसकी चंचलता को हम शान्त कर दें। यह प्रत्याहार की प्रथम अवस्था है, इन्द्रियों की चंचलता को शान्त करना। इसलिये आपने देखा होगा कि अभी कायास्थैर्यम् के अभ्यास को उस रूप में समझाया जा रहा है जैसा शास्त्रों में कहा गया है कि एक-एक इन्द्रिय को देखकर उसे स्थिर बनाने का, शान्त करने का

प्रयत्न करना है। उसके बाद मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार से जो चंचलता की स्थिति उत्पन्न होती है, आवेग उत्पन्न होते हैं, उनको सम्भालना दूसरा प्रत्याहार है। तीसरा प्रत्याहार होता है प्राणों का।

हमलोग प्राणों के बारे में एक निश्चित मंतव्य बना लेते हैं कि अगर प्राण है तो यही है, और उसके स्थूल तथा सूक्ष्म अनुभवों को हम भूल जाते हैं। लोग प्राणों के बारे में सोचते हैं कि शरीर में झुनझुनाहट होनी चाहिये, गर्मी होनी चाहिये, कुछ अनुभव होना चाहिये प्राणों के संचार का। व्यक्ति का दृष्टिकोण हमेशा एक बिन्दु में आकर्षित हो जाता है और अन्य बिन्दुओं को भूल जाता है। कल हमने आपको बतलाया कि आपके पैरों में जो प्राण हैं वे आपके शरीर को स्थिर बनाते हैं। आपने अनुभव भी किया होगा कि जब आपका ध्यान पैरों में गया तब आप एकपाद-प्रणामासन अधिक सरलता और सहजता से कर पाये। लेकिन आज जब हमने पैर उठाने के लिये कहा तो किसी को याद नहीं आया कि पैर को हम कैसे स्थिर कर सकते हैं। कल ही हमने कहा था कि शरीर को स्थिर रखने के लिये पैरों में प्राणों को स्थिर करो, लेकिन आज आप भूल गये उस बात को, केवल अपनी टाँग को इधर-उधर उठाने का प्रयास कर रहे थे। यह एक उदाहरण दिया कि इन बिन्दुओं को जब तक हम अपनी साधना में शामिल नहीं करते, साधना में प्रगति नहीं होती।

प्राणों की सजगता, प्राणों का प्रत्याहार, मन की सजगता, मानसिक प्रत्याहार—ये सब प्रेरित करते हैं कि मनुष्य स्वयं का साक्षात्कार करे। जब आत्म-साक्षात्कार की बात होती है तो आप हमेशा भगवान से जोड़कर कहते हो कि आत्म-साक्षात्कार का मतलब आत्मा को जान लेना, परमात्मा को जान लेना। कोई भी व्यक्ति नहीं कहता कि आत्म-साक्षात्कार का अर्थ होता है अपने मन के व्यवहार को जानना। यहीं पर आप मार खाते हो और उत्थान भी अगर होगा तो यहीं से होगा। योग की जितनी भी शिक्षाएँ हैं वे सब कहती हैं कि मन के विचार को और मन के व्यवहार को, दोनों को ठीक करो। काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मात्सर्य—मन की इन छः अवस्थाओं से हर व्यक्ति प्रभावित है, लेकिन इन छः अवस्थाओं से मुक्ति का साधन कोई नहीं खोजता। हम अपनी नाक कैसे पकड़ें, आदमी वह जानना चाहता है, लेकिन मन को पकड़ना कोई नहीं जानना चाहता। मन की विषम परिस्थितियों से मुक्त कोई नहीं होना चाहता है, लेकिन एकाग्र सब होना चाहते हैं। मन की विषम परिस्थिति को कोई संभाल नहीं सकता है, लेकिन आध्यात्मिक चेतना से सभी युक्त होना चाहते हैं। साधकों में इससे बढ़कर विडम्बना क्या हो सकती है?

बात हो रही है प्रत्याहार की और यह अब हमलोगों की साधना का अगला प्रयास है, अब इसको सिद्ध करना है। प्रत्याहार को सिद्ध करने के लिये आँखें बन्द करना, ध्यान में बैठना, जमीन पर शवासन में लेट जाना, शरीर को आराम देना—यह सब आवश्यक नहीं है, बल्कि स्वयं को देखना और हर परिस्थिति में जो प्रत्यय मन में बन रहे हैं उन प्रत्ययों को हटाते जाना है। यही साधना हमारे परम गुरुदेव, स्वामी शिवानन्द जी हमेशा किया करते थे। उन्होंने अपनी आत्मकथा में लिखा है कि 'मेरे मन में कभी भी किसी के लिये दूषित विचार नहीं आते हैं, क्योंकि मैं उन्हें आने ही नहीं देता हूँ। जब भी मुझे आभास होता है कि मेरा मन सकारात्मकता से मुख फेर रहा है, मैं उसे पुनः खींचकर सकारात्मकता से जोड़ देता हूँ। जो बुराई है उसको अच्छाई में परिवर्तित करता हूँ, जो कमजोरी है उसको सामर्थ्य में परिवर्तित करता हूँ। यही मेरे जीवन का योग है, यही मेरे जीवन की साधना है।'

अपने मन को संभालने के लिये मन की सकारात्मकता को सतत् बनाये रखना, यही उनका मार्ग है और इसके लिए उन्होंने उपाय भी बतलाया है, प्रतिपक्ष भावना। क्रोध आये तो उसे शान्ति में परिवर्तित करो। हिंसा की भावना उत्पन्न होती है तो उसे अहिंसा में परिवर्तित करो। द्वेष और अलगाव की भावना होती है तो उसे प्रेम और सहयोग की भावना में परिवर्तित करो। प्रत्याहार सिद्ध करने के लिये हमलोगों को प्रतिपक्ष भावना को एक साधना के रूप में अपनाना है। प्रत्याहार केवल आँखों को बन्द करने से सिद्ध नहीं होता, बल्कि अपने मन की तामसिक अवस्था को सकारात्मक बनाने से अधिक सिद्ध होगा। आखिर आँखें बन्द करके आप कर क्या

रहे हो? केवल देख रहे हो, लेकिन जब आप नकारात्मक को सकारात्मक में बदलने का एक प्रयत्न करते हो तो एक विधि से गुजरते हो और वह विधि आपको पूर्णता की ओर ले जाती है। इसको कहते हैं प्रत्याहार।

यह हमलोगों के द्वितीय अध्याय का प्रथम चरण है और जैसा हमने पहले संकेत दिया है, प्रत्याहार में सजगता होनी चाहिये, विश्रांति की अवस्था होनी चाहिये, एकाग्रता होनी चाहिये। एक उदाहरण देता हूँ। बच्चों ने पिछली शाम को अपनी प्रस्तुति में एक गाना गाया था—जल ही जीवन, जीवन ही जल है। वह गाना लम्बे समय तक लोगों के मन में गूँजता रहा। रात के समय भी वही गाना मेरी खोपड़ी में चल रहा था, जा ही नहीं रहा था। फिर मैंने सोचा कि इस गाने से मैं इतना प्रभावित क्यों हुआ कि अब यह मेरे दिमाग से जा ही नहीं रहा है। इसके पीछे कुछ कारण जरूर होगा। कारण के बारे में सोचना शुरू किया, पर मालूम नहीं पड़ा। साढ़े दस बज रहे हैं, नींद आ ही नहीं रही है। गाना दिमाग में चले जा रहा है। फिर हमने सोचा कि ठीक है, वर्तमान में तो इसका कारण नहीं दिख रहा है, चलो देखते हैं कि मेरी स्मृति में कुछ है क्या। अपनी स्मृति में गये और मालूम हुआ कि वह गाना Baba black sheep की धुन पर है, जिसे हम लोग बचपन में सुना और गाया करते थे! जैसे ही यह स्मृति दिमाग में आई, गाना शान्त हो गया, हमको नींद आ गई। लेकिन इसके पहले समझ में नहीं आ रहा था कि यह गाना मन में चल क्यों रहा है! क्या यह इतना अच्छा है कि हमारी अन्तर्चेतना को भा गया? बाद में जब पता चला कि नहीं, यह एक पुरानी स्मृति थी तो हँसी भी आई!

खैर यह एक दृष्टांत दिया कि यह भी एक विधि है एक प्रत्यय को दूर करने की। अगर हम यह नहीं करते तो गाना प्रत्यय बन जाता और फिर दूसरे, तीसरे, चौथे दिन याद आते रहता और फिर उसके प्रति एक राग की उत्पत्ति होती कि हाँ भाई, बहुत अच्छा गाना है, चलो फिर गायेंगे, बच्चे लोग, बड़े लोग सब कोई गायेंगे। मतलब राग के कारण फिर वह एक पूरी कड़ी बन जाती। राग प्रत्यय का निर्माण करता है। प्रत्यय का मतलब होता है जहाँ पर हम अपने आपको टिका सकें, एक आधार।

इसीलिये हम कह रहे हैं कि परेशानी, चिन्ता और दु:ख की जितनी भी अवस्थाएँ हैं, इन सबका स्रोत शरीर तो नहीं है, बल्कि इन सबका उत्पत्ति केन्द्र मन है। मन विविध अस्त्रों-शस्त्रों के साथ सुसज्जित है, कभी तीर चलाता है तो कभी तलवार भी चलाता है। इसी को संभालने का जो तरीका है वह है प्रत्याहार और इस योग संगोष्ठी में हमलोग इसी पर थोड़ा ज्यादा जोर दे रहे हैं ताकि प्रत्याहार के विभिन्न बिन्दुओं को हम अपने सामान्य जीवन में लागू कर सकें। इसलिये अलग-अलग दृष्टांत भी देकर मैं इस चीज को समझाने का प्रयास कर रहा हूँ।

–27 अक्टूबर 2018, मुंगेर योग संगोष्ठी, गंगा दर्शन

यौगिक जीवनशैली

स्वामी सत्यसंगानन्द सरस्वती

योग का मुख्य विषय और लक्ष्य अपने अन्दर छिपी दिव्यता को जानना और जागृत करना है। अभी आप अपनी दिव्यता से अनभिज्ञ हैं। योग के माध्यम से आपको यह कार्य करना है। रामायण के सुन्दरकाण्ड में एक प्रसंग आता है—सीता जी की खोज में निकले हनुमान अन्य वानरों के साथ समुद्र के किनारे आकर उसके विस्तार को देखकर हताश हो जाते हैं। उस समय जाम्बवन्त हनुमान को उनकी शक्ति और सामर्थ्य की याद दिलाते हैं। हनुमान आकाश में उड़ना जानते थे, लेकिन वे अपनी सिद्धि भूल चुके थे। तब जाम्बवन्त ने उन्हें आकाश में छलांग लगाकर समुद्र को पार करने के लिए प्रेरित किया।

हम भी आपको यहाँ केवल एक ऐसे तथ्य का स्मरण कराना चाहते हैं, जिसे आप पहले से जानते हैं लेकिन भूल गये हैं। आप उस योग विद्या को भूल गये हैं जो इस धन्य भारतभूमि में पैदा होने के कारण आपकी अपनी धरोहर है। ये आपके पूर्वज ऋषि-मुनियों का आपके लिए अमूल्य वरदान है।

हम आपको कुछ सिखाना-पढ़ाना नहीं चाहते, केवल आपको याद दिलाना चाहते हैं। आप पहले से ही सब कुछ जानते हैं। हम केवल उस परदे को हटायेंगे

जिसने आपकी स्मृति को ढक रखा है। यह महान् विद्या हमें ऋषि परम्परा से प्राप्त हुई है और इसकी प्रासंगिकता प्रत्येक युग में है, चाहे वह सत्य युग हो या त्रेता युग। कलियुग में तो इसका अत्यधिक महत्त्व है ही क्योंकि इस युग में मनुष्य अपनी वास्तविक प्रकृति से बहुत दूर चला गया है।

यहाँ पर यह प्रश्न स्वाभाविक रूप से उठ सकता है कि आखिर योग है क्या? योग सरल, स्वाभाविक जीवन जीने की कला है, जिसमें आप अपने आप को जानना सीखते हैं। इस समय आप ऐसा जीवन नहीं जीते। यदि आप एक सहज, प्राकृतिक जीवन जीते तो आपको किसी से पूछने की जरूरत नहीं पड़ती, आपका मन और शरीर ही आपको बतलाते कि क्या करना चाहिए। पंच महाभूतों से निर्मित यह शरीर प्रकृति की ही उपज है, इसलिए आप जिस भी जीवन शैली का चयन करते हैं, वह इनके अनुरूप होनी चाहिए। वह प्राकृतिक होनी चाहिए, कृत्रिम नहीं। आधुनिक युग में हम ऐसे अनेकों पदार्थ ग्रहण करते हैं जो प्राकृतिक नहीं होते और हमारे शरीर में असंतुलन पैदा करते हैं। इसलिए जब हम योग की चर्चा करते हैं, तब हमें केवल आसन या प्राणायाम तक ही सीमित नहीं रहना चाहिए। ये तो योग के अंश मात्र हैं। योग का वास्तविक अभिप्राय यौगिक जीवनशैली से है।

योग सिखलाने के बजाय हमें लोगों को यौगिक जीवन जीने के लिए प्रेरित करना है। दिनभर में केवल दस मिनट आसनों का अभ्यास कर लेना पर्याप्त नहीं। यह तो वैसे ही हुआ जैसे सालभर पापों की गठरी बढ़ाने के बाद साल के अन्त में गंगास्नान करके दुबारा अगले साल दुराचार के लिए तैयार हो जाना। एक ओर आप लगातार विषाक्त पदार्थ ग्रहण कर रहे हैं और साथ ही यह चाह रहे हैं कि दस मिनट के योगाभ्यास से उनका निष्कासन हो जाए! यह सम्भव नहीं।

यदि आप अपनी जीवनशैली की गुणवत्ता को बढ़ाना चाहते हैं तो आपको यौगिक जीवन अपनाना होगा। लोग योग की ओर प्राय: तब अग्रसर होते हैं जब उनका जीवन असंतुलित हो जाता है, जब उनके शरीर, विचारों और भावनाओं में असामंजस्य आ जाता है। इस असंतुलन का निदान करने के लिए मात्र योगाभ्यास पर्याप्त नहीं, इसके लिए तो यौगिक जीवनशैली अपनानी होगी।

यौगिक जीवन के दो आधार हैं—संतुलन और अनुशासन। संतुलन का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण हमें अपने चारों ओर की प्रकृति से मिल सकता है। प्रकृति पूर्णतया संतुलित है। दिन को रात संतुलित करती है और गर्मी को सर्दी। इस प्रकार प्रकृति अपने प्रत्येक आयाम में संतुलन बनाये रखती है। यही संतुलन आपको अपने जीवन के हर क्षेत्र में लाना है। आप कितनी देर सोते हैं, कितना भोजन लेते हैं, कितना बोलते हैं, कितना सोचते हैं—आपको इन सब चीजों को देखना और संयत करना होगा। संतुलन का यही अर्थ है। *अति सर्वत्र वर्जयेत्*—जीवन

के हर क्षेत्र में मध्यम मार्ग अपनाइये। शरीर और मन तभी जवाब देने लगते हैं जब जीवन के किसी क्षेत्र में अति होती है। और तब आपको उस अति की भारी कीमत भी चुकानी पड़ती है।

अनुशासन एक ऐसा शब्द है जिसे सुनकर अधिकतर लोग घबरा जाते हैं। लेकिन देखा जाए तो जीवन के किसी भी क्षेत्र में उपलब्धि पाने के लिए आपको स्वयं को अनुशासित करना होगा। चाहे आप संगीतकार हों या व्यवसायी या गृहिणी, अपने कार्य को अच्छी तरह संपादित करने के लिए अनुशासन आवश्यक है। योग और अनुशासन कंधे से कंधा मिलाकर एक साथ चलते हैं। अनुशासन के बिना आप योग का अभ्यास करना तो दूर, उसके बारे में सोच भी नहीं सकते। संतुलन और अनुशासन की नींव पर ही यौगिक जीवन का निर्माण होता है। आपको इसी यौगिक जीवनशैली को आत्मसात् करना है, मात्र आसन या प्राणायाम का अभ्यास नहीं।

कामनाओं एवं वासनाओं का दमन, वाणी का संयम, अध्यात्म जग में विचरण, सद्विचारों में रमण एवं योगियों का अनुशीलन करने वाला व्यक्ति निर्मुक्त बन जाएगा। यदि अनन्त काल से दु:खित अखिला का भार उठाना है, असत्य और अधार्मिकता का नाश कर सत्य धर्म की नींव जमानी है तो अपनी पाशविक वृत्तियों को पवित्र बनाओ। यही अध्यात्म-जीवन की कुञ्जी है, जिसे पाने से सुख और शान्ति आपके अनुचर बन जाएँगे।

– स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

क्रोध पर विजय

स्वामी शिवानन्द सरस्वती

मानस-सरोवर में क्रोध एक वृत्ति के समान लहराता है। जब रजस् और तमस्, दोनों गुणों की क्रीड़ा होती है, तब मानस-सरोवर में यह लहर जागती है। कुछ लोग इसे केवल रजोगुणसमुद्भव मानते हैं और दूसरे रज-तमोगुणसमुद्भव मानते हैं। जब एक व्यक्ति दूसरे के प्रति दुर्भावना से भर जाता है, तब अन्त:करण से क्रोध की धूमकालिमा जागती है। दूसरे शब्दों में यह इच्छा या कामवासना का ही रूपान्तर है। जिस प्रकार दूध का रूपान्तर दही में हो जाता है, उसी प्रकार इच्छा ही क्रोध का रूप धारण कर लेती है। शान्ति, ज्ञान और भक्ति से इसका जन्मजात वैर है।

अर्जुन ने श्रीकृष्ण से पूछा था कि 'वह कौन-सी शक्ति है जो मनुष्य को अपराध या पाप करने पर विवश करती है?' तब भगवान कहते हैं कि 'कामना और क्रोध, जो रजोगुण से उत्पन्न हुए हैं, समस्त पापों के मूल हैं।' अन्यत्र भगवान कहते हैं कि 'नरक के तीन मुख्य द्वार हैं—काम, क्रोध और लोभ। इन तीनों का त्याग करने से नरक के द्वार को बन्द किया जा सकता है।'

क्रोध का निवास स्थूल शरीर में नहीं, लिंग शरीर में है; किन्तु जैसे पानी घड़े के छेदों से निकलता है, उसी प्रकार यह भी स्थूल शरीर में प्रकट होता है। क्रोध से आठ दुर्गुणों का जन्म होता है। अत: क्रोध का दमन किया जा सके तो अन्याय, ईर्ष्या, परधनहरण, हत्या, कठोर शब्द, निर्दयता, उतावलापन और उपद्रव—इन आठों का दमन अवश्य हो जाता है।

जब व्यक्ति की इच्छा पूरी नहीं होती और जब कोई उस इच्छा की पूर्ति के मार्ग पर रोड़ा बनकर खड़ा हो जाता है तो क्रोध का आवेश व्यक्ति की रग-रग को प्रभावित कर देता है। इच्छा क्रोध के रूप में बदल जाती है। क्रोधावेश द्वारा प्रभावित हो जाने पर वह हर प्रकार के नृशंसात्मक कार्य करता है। उसकी स्मृति का विलोप हो जाता है, बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है और प्रतिभा कुण्ठित। गीता में श्रीकृष्ण ने कहा है—

क्रोधाद्भवति सम्मोह: सम्मोहात्स्मृतिविभ्रम:।
स्मृतिभ्रंशाद् बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात्प्रणश्यति॥2.63॥

अर्थात् क्रोध से होता है सम्मोह और सम्मोह से स्मृति का विभ्रम। स्मृति विभ्रमित हुई तो बुद्धि का नाश निश्चय है और बुद्धि के नाश से मनुष्य का विनाश हो जाता है। क्रोधावेश में मनुष्य हत्या करता है। भावुकता और उद्रेक से वह पागल-सा हो जाता है। क्रोध आ जाने पर व्यक्ति मुँह से क्या-क्या बातें नहीं निकालता, क्या-क्या कुशब्द नहीं बोलता? एक कटु और तीखा शब्द अन्त में मारपीट की नौबत ले आता है।

जल-भुन जाना, आग-बबूला हो जाना, आवेश, रोष, उत्पात, चिढ़ जाना, दिमाग का चढ़ जाना, दिमाग का गरम हो जाना—ये सब क्रोध के रूप-रूपान्तर हैं। प्रत्येक की तीव्रता विशेष अनुपात को लेकर होती है।

जब एक व्यक्ति दूसरे को सुधारने के लिए और उसकी गलतियों को रोकने के लिए क्रोध प्रकट करता है तो उसमें स्वार्थ का पुट नहीं होता, अत: उसे उचित क्रोध कहा जाता है। मान लो कोई व्यक्ति किसी स्त्री के साथ दुर्व्यवहार करते हुए लोगों द्वारा रोका जाता है। उस समय उन लोगों को जो क्रोध आता है, उसे रोष कहा जाता है। केवल स्वार्थसहित और लोभजन्य क्रोध अनुचित है। कभी-कभी शिष्य जब गलत रास्ते पर जा रहा हो तो गुरु को उसपर क्रोध प्रकट करना पड़ता है। अन्दर तो वह शान्त रहता है, पर बाहर से केवल शिष्य के कल्याणार्थ क्रोधित होता है, अत: उसके अन्त:करण पर प्रभाव नहीं पड़ता। पर यह सावधानी रखनी चाहिए कि वह क्रोध देर तक न रहे, अन्यथा उसका अंकुर अन्त:करण में जम जायेगा। जिस प्रकार समुद्र की लहरें आती और दब जाती हैं, उसी प्रकार सुधार-साधन के रूप में क्रोध आ भी जाए तो उसको तुरन्त रोक देना चाहिए।

छोटी-छोटी बातों के लिए यदि क्रोध आ जाता है तो मानसिक निर्बलता के लक्षण तुरन्त जान लो। जब कोई व्यक्ति तुम्हारा अपमान करता है, तुम्हें गालियाँ सुनाता है और यदि तुम तब भी शान्त और निर्लिप्त रह सको तो जान लो कि तुम्हारी आन्तरिक शक्ति प्रबल है, क्योंकि आत्म-नियन्त्रण और आत्म-संयम मानसिक सफलता के सूचक हैं। जो जल्द ही आपे से बाहर हो जाता है, वह दुर्बल चरित्र से प्रभावित रहता है और भावनाओं की धारा में बहने लगता है।

बार-बार दोहराने से क्रोध को बल मिलता है। यदि तत्क्षण ही उसका दमन कर दिया जाए तो व्यक्ति को मानसिक शक्ति उपलब्ध होती है। जब क्रोध-वासना को वश में कर लिया जाता है तो वह आध्यात्मिक शक्ति के रूप में त्रिलोक-विजयिनी शक्ति बन जाती है। जैसे ईंधन की उष्णता को विद्युत बना दिया जाता है, उसी प्रकार क्रोध का परिमार्जन कर ओज-शक्ति प्रकट की जा सकती है।

क्रोध करने से शक्ति का अपव्यय होता है। क्रोध से स्नायविक केन्द्र व्यथित हो जाते हैं। आँखें लाल, शरीर संकुचित, हाथ-पाँव काँपने लगते हैं। क्रोध से भरे हुए को वश में करना अति दुष्कर है। तत्काल के लिए उसमें शक्ति का केन्द्रीयकरण होता है, अत: वह बहुत तेजस्वी हो जाता है, किन्तु बाद में उसकी प्रतिक्रिया होती है और वह निराश-सा हो जाता है।

कई उदाहरण सुनने में आते हैं कि दूध पिलाती हुई माता को जब क्रोध का आवेश आया तो बालक की मृत्यु हो गयी। इससे यह सिद्ध होता है कि क्रोध के आने पर शरीर में विष की-सी क्रिया होती है। क्रोध के समय शरीर के सभी भागों में एक विशेष प्रकार की लहर लहराती है, वह विष की लहर होती है। लिंग शरीर

से काले तीर छूटकर बाहर आते हैं। यौगिक अन्तर्दृष्टि की शक्ति से इन तीरों को देखा जा सकता है। आधुनिक मनोविज्ञान इस पर हामी भरता है कि सभी रोग क्रोध के ही रूप-रूपान्तर है। गठिया, हृदय-रोग, स्नायविक दौर्बल्य आदि रोग क्रोध की ही प्रतिक्रिया के परिणाम हैं। एक बार क्रोध आ जाने से उसकी प्रतिक्रिया के टलने में कुछ महीने लग जाते हैं।

वीर्य-क्षय की अतिशयता भी क्रोध का कारण होती है। कामवासना जड़ है तो क्रोध उसका तना। अत: मूल का ही पहले उन्मूलन करना होगा। कामोन्मूलन करने से क्रोध का तना अपने-आप गिर जायेगा। अक्सर देखा गया है कि कामी व्यक्ति ही जल्दी आपे से बाहर हो जाता है। वीर्य-क्षय होने से व्यक्ति बात-बात में दिमाग गरम कर लेता है, इसे चिढ़ जाना कहते हैं। ब्रह्मचारी को क्रोध पीड़ित नहीं कर सकता।

इसका मूल कारण खोजने पर तह में केवल अज्ञान और अहंकार ही मिलेगा। विचार से अहंकार का दमन और विचारपूर्वक कर्म करने से अज्ञान का आवरण भी लुप्त हो जाता है। प्रतिपक्ष भावना से यह सम्भव है कि क्रोध पर पूर्ण विजय पायी जा सके। अत: क्षमा, प्रेम, शान्ति, करुणा और मित्र भाव आदि से क्रोध को सिर न उठाने दो। इन अनुकरणीय भावनाओं द्वारा क्रोध पर विजय प्राप्त की जा सकती है और इनका प्रयोग करते ही क्रोध का वेग कम होने लगता है, वह पहले के समान उत्पीड़क नहीं रहता। आत्मज्ञान की प्राप्ति हो गई तो क्या कहना! क्रोध वाष्प-समूह के समान विलुप्त हो जाता है।

यदि क्रोध पर विजय पा ली गयी तो आधी साधना सम्पन्न हो जाती है। क्रोध पर विजय पाने से मन पर विजय मानी जाती है। जिसने क्रोध पर विजय स्थापित कर ली, वह कभी भी अयोग्य और बुरे कर्म नहीं करेगा। वह सदा न्याय-प्रिय रहेगा।

जब क्रोध गम्भीर रूप धारण करता है तो उसका दमन दु:साध्य हो जाता है, इसलिए हमें चाहिए कि आरम्भ में ही, जब क्रोध चित्त में बीज के रूप में हो, उसका दमन कर दिया जाए। मन की गति पर सतत् पहरा रहना चाहिए, सावधानी से मन की गति पर नियन्त्रण किया जाना चाहिए। ज्यों-ही मन में क्रोध के आविर्भाव का लक्षण प्रकट हो, त्यों-ही उसे रोक देना चाहिए। प्रारम्भ में तो नहीं, परन्तु कुछ समय के बाद अभ्यास हो जाने पर क्रोध का दमन आसानी से किया जा सकता है।

जब कभी यह प्रतीत होने लगे कि क्रोध आने वाला है, त्यों-ही बोलना बन्द कर दो। मौन के निरन्तर अभ्यास से क्रोध पर विजय पायी जा सकती है। सदा मधुर और अच्छे शब्दों का प्रयोग करो। यदि शब्दों का चयन अच्छा नहीं किया गया तो कभी भी झगड़े की सम्भावना रहती है।

यदि देखो कि क्रोध पर विजय पाने की सम्भावना नहीं है तो तुरन्त स्थान से हट जाओ। दूर तक घूम आओ। कुछ ठण्ढा जल भी पी लो। इससे शरीर और मन को शीतलता पहुँचती है। दस मिनट तक दीर्घस्वर में 'ॐ' या 'ॐ शान्ति' का पाठ करो। अपने इष्ट-देवता के चित्र की ओर देखने लग जाओ। प्रार्थना करो और पाँच-दस मिनट तक अपने मन्त्र का जप भी। धीरे-धीरे क्रोध चला जायेगा।

सबसे अच्छा तो यही है कि अपने क्रोध का कारण खोजो। कोई व्यक्ति तुम्हें गाली देता है तो तुम क्रोधित हो जाते हो। जब वह तुम्हें कुत्ता कहकर सम्बोधित करता है तो तुम्हें क्रोध क्यों आता है? उसके कहने से क्या तुम्हारी पूँछ या चार पाँव निकल आये? तब एक छोटी-सी बात के लिए क्यों दिमाग गरम करते हो? सोचो तो सही उस गाली का असली स्वरूप है ही क्या? क्या वह वातावरण में ध्वनि की एक लहर मात्र नहीं है? मैं शरीर हूँ या आत्मा? तब आत्मा को कौन गाली दे सकता है? क्या सचमुच क्रोध का प्रतिकार करना चाहिए? क्रोध का प्रतिकार करने से शक्ति का अपव्यय होता है। यदि कोई गाली भी दे तो चुप ही रहना चाहिए।

उसका प्रतिकार कर विचारों की दुनिया को कलुषित नहीं करना चाहिए। घृणा की लहर जब बाहर भेजी जाती है तो बाधाओं का कारण बनती है।

इस दुनिया में चंद दिन तक रहना है। इस छोटी-सी अवधि के लिए यह सब बखेड़ा क्यों? बोलने दो दूसरों को, जो उनके मन में आये, तुम उन्हें क्षमा करते जाओ। इस प्रकार तुम अपने क्रोधी स्वभाव का परिष्कार कर सकते हो। एक दिन ऐसा भी आ सकता है, जब तुम किसी प्रकार के वातावरण से प्रभावित नहीं हो पाओगे और किसी प्रकार का कठोर या अश्लील सम्बोधन तुम्हें प्रभावित नहीं कर पायेगा। तुम केवल हँसकर ही उसका प्रतिकार कर दोगे।

कभी-कभी ऐसे अवसर आ जाते हैं जब क्रोध को जल्दी उत्साह मिलता है। ऐसे अवसरों पर भी शान्त रहना चाहिए। भूख तथा रोगग्रस्त अवस्था में क्रोध का आना आसान होता है। कुछ दु:ख आ जाने, व्यापार में हानि पहुँचने या किसी चीज के खो जाने से क्रोध को प्रेरणा मिलती है। गुहावासी विरक्त यदि कहे कि उसने क्रोध पर विजय पा ली है तो विश्वास नहीं करना चाहिए क्योंकि उसके संस्कार कुछ समय के लिए दबे पड़े हैं और अवसर न मिलने से सिर नहीं उठा पाते। यदि उसे समाज में व्यवहार करना पड़े अथवा किसी ने गाली दे दी तो वह भी आपे से बाहर हो जायेगा। इसलिए मैं अपने शिष्यों को सदा व्यवहार-जगत् में रखकर शिक्षा देने के पक्ष में हूँ। दुनिया अनुभवों के लिए विशाल आगार है और सच्ची शिक्षा दुनिया में ही पायी जाती है। सोना कसौटी पर चढ़कर ही खरा उतरता है, व्यक्ति भी व्यवहार-जगत् में सफल होकर ही महान् पुरुष बनता है।

प्रत्येक का कर्तव्य है कि इस शक्तिशाली शत्रु के दमन के लिए पूर्ण प्रयत्न करे। सात्त्विक भोजन, जप, विचार, ध्यान, प्रार्थना, सत्संग, सेवा, कीर्तन, आत्मचिन्तन, प्राणायाम, ब्रह्मचर्य आदि साधन हैं, जिनके द्वारा इस शक्तिशाली शत्रु पर सामूहिक वार कर विजय पायी जा सकती है। अकेले आक्रमण करने से इसका दमन नहीं किया जा सकता। धूमपान, मांसाहार और मद्यपान व्यक्ति को चिड़चिड़ा बना देते हैं। इनका परित्याग ही श्रेयस्कर है। अपनी संगति का ध्यान भी अवश्य रखो। कम बोलो और कम मिलो। क्षमा, विश्वप्रेम, करुणा और निरभिमानता का अभ्यास करो।

हर रोज प्रात:काल चार बजे उठ कर दस मिनट तक विचार करो कि आज से तुम क्रोध को प्रकट नहीं होने दोगे और कल्पना करो, यदि कुछ कार्य ऐसा हो जाए जिससे क्रोध का आना स्वाभाविक हो तो तुम कैसे उसका दमन करोगे? अनेकों युक्तियाँ और विधियाँ सोच कर उपयुक्त करो।

देह त्यागने से पहले जिस व्यक्ति ने कामना और क्रोध पर विजय प्राप्त कर ली, वह धन्य है! जो कामना और क्रोध-वासना से विमुक्त है, जिसने अपने मन को वश में कर लिया है, ऐसे व्यक्ति को परमात्म-निकेतन मिलता है।

सुमिरन और समर्पण

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

संसार सागर में एक नाव है—मन उसका एक चप्पू, बुद्धि दूसरा। खेते-खेते जीवात्मा थक गया है। वह हार गया है। इस हालत में वह क्या करेगा? या तो निराश होकर बैठ जायेगा, या पास से जाने वाले बड़े जहाज से अपनी नैया का योग कर देगा। इसे कहते हैं पूर्ण समर्पण। इसका अर्थ हुआ कि अपनी तमाम मान्यताओं को प्रभु में लीन कर देना और प्रभु के आसरे ही जीवन-यात्रा पूरी करना।

कहते तो सभी हैं कि मैं प्रभु का हूँ और उसकी इच्छा ही मेरे लिए सब कुछ है, परन्तु कदम-कदम पर इस विश्वास का विरोध करते हैं। यह तो ऐसा ही हुआ, जैसे

कोई स्त्री अपने पति से कहे कि 'मैं पूरी तुम्हारी हूँ', परन्तु दूसरे ही क्षण अपना व्यक्तित्व भी प्रदर्शित करे और अपनी ही मर्जी पर चले। समर्पण का मतलब सब कुछ सर्वतोभावेन दे देना होता है। उसके बाद हमारा हम पर कोई हक नहीं। हम उसके यन्त्र बन जाते हैं, और वह हमारा यन्त्री। हमें हर क्षण उसकी अश्रुत आज्ञा के अनुसार चलने के हेतु तैयार रहना पड़ता है। धीरे-धीरे हमारा मन अहंभाव से खाली हो जाता है। तभी वह हमारे माध्यम से प्रकट होता है। अत: हमें अपने जीवन की तमाम गतिविधियों का हक उसको सौंप देना चाहिए। पर कैसे?

साधना के द्वारा अपने अन्दर उसकी चेतना को जगाते जाओ, उसका रूप देखते जाओ, उस पर अनुराग बढ़ाते जाओ, उसकी लीलाओं का चिन्तन करते जाओ, उसकी कथा सुनते जाओ, उसका नाम जपते जाओ। धीरे-धीरे तुम्हें स्पष्ट प्रतीत होगा कि वे ही तुम्हारे जीवन में सक्रिय हो गये हैं तथा सारे कारोबार वे ही करने लग गये हैं।

इस मन को अपना मन न मानकर प्रभु-चरणों का सेवक बना दो, क्योंकि असली स्वामी तो वही हैं न? जब मन प्रभु के अनुराग में रम जाता है, बुद्धि उनमें स्थिर हो जाती है, विषयों का प्रलोभन समाप्त हो जाता है, चिन्ता मर जाती है, द्वन्द्व समाप्त हो जाता है, तभी उनका अनुग्रह दिखने लगता है, तब पूर्ण होता है समर्पण, और तब ही जागती है चिरसुप्त योगशक्ति, जो प्रभु की महाशक्ति है। योगशक्ति के जागने पर सारे कारोबार अपने-आप होने लगते हैं, असम्भव सम्भव हो जाता है। अत: योगशक्ति को जगाने के लिए प्रभु के प्रति पूर्ण अनुराग साधना होगा।

यह चित्त संस्कारों से भरा पड़ा है, सदा वृत्तिमय रहता है, और कुछ-न-कुछ सोचता ही रहता है। इसे स्थिर करना इतना छोटा खेल नहीं। परन्तु यह उसकी स्वाभाविक टेव है। जैसे-जैसे अनुराग के विचार अन्दर ठहरते जायेंगे, वैसे-वैसे चित्त की पुरानी टेव टूटती जायेगी। यदि अनुराग में तीव्रता, गहराई, सच्चाई, व्याकुलता, व्यथा और भावना आ जाए तो चित्त के पुराने संस्कार झड़ने लगते हैं। यदि साधक का चित्त आरम्भ में न लगे, तो भी उसे अभ्यास जारी रखना चाहिए। धीरे-धीरे चित्त स्थिर होता जायेगा।

अभ्यास के दो रूप होते हैं, निष्ठा और सुमिरन। एक आसन में बैठकर प्रभु का चिन्तन करना ही निष्ठा है। परन्तु सुमिरन! यह तो 'याद' करना है। उसकी सदा याद रहे। याने नाम याद रहे, लीला याद रहे, भाव याद रहे, अनुभव याद रहे, उपस्थिति याद रहे, अनुपस्थिति याद रहे, अभाव याद रहे, संग याद रहे, वियोग याद रहे, रूप याद रहे और उनके सतत् आशीष याद रहें, तथा और कोई याद न रहे। यह है सुमिरन, स्मरण, याद या चिन्तन। निष्ठा की सफलता सुमिरन पर निर्भर है। सुमिरन की गहराई, तीव्रता, सच्चाई, व्याकुलता, व्यथा, भावना और निरन्तरता पर निष्ठा का भविष्य निर्भर करता है। मात्र निष्ठा से कुछ नहीं बनता। इसलिए मात्र निष्ठा वाले साधक चित्त विक्षेप की शिकायत करते हैं।

सुमिरन किसका करना चाहिये, किसका नहीं, यह भी समझो। भोगों की अनित्यता, विक्षिप्त विचारों की निरर्थकता, कर्मों की जटिलता और संसार के स्वार्थ का सुमिरन 'वैराग्य' के नाम से जाना जाता है। प्रभु के नाम, रूप, लीला, कृपा, अनुभव आदि का सुमिरन 'भक्ति' के नाम से जाना जाता है। साधक को वैसे तो दोनों प्रकार के सुमिरन का अभ्यास होना चाहिये, परन्तु भक्ति-रूप सुमिरन परम मनोरम, सुखद और प्रकृति के अनुकूल है। भक्तिपूर्वक सुमिरन करते-करते वैराग्य सध ही जाता है, अलग अभ्यास की आवश्यकता नहीं रहती।

सुमिरन के अनुरूप निष्ठा बनती है। तदनुरूप निद्रा आती है। तदनुरूप ही स्वप्न आते हैं। तदनुरूप ही निद्रा टूटती है। तदनुरूप ही 'नम्बर' मिलता है। तदनुरूप ही अनुभव होते हैं। तदनुरूप ही संयम आता है। तदनुरूप ही 'कमरा' मिलता है। तदनुरूप ही समय लगता है। साधना में श्रेष्ठतम साधना है सुमिरन।

कभी सामान्य सुमिरन, कभी तीव्र सुमिरन, कभी विह्वलीभूत सुमिरन। विह्वलीभूत सुमिरन की गति और शक्ति जबर्दस्त होती है। सोया हुआ जाग उठता है। तुरन्त 'योग' हो जाता है। तुरन्त 'उत्तर' आ जाता है। विह्वल होकर सुमिरन करते-करते जो अवस्था आती है, उसमें 'वह' आ भी जाता है, सचमुच में आता है।

सुमिरन में विरह व्याकुलता का पुट मिल जाने पर पंछी उड़ते-उड़ते अगम अटारी पर जा पहुँचता है। इसी अवस्था में लौकिक जीवन का पर्दा हटता है, अलौकिक लोक आलोकित हो उठते हैं। इसलिए सुमिरन के इष्ट अपने प्रभु के साथ भक्त का वह सम्बन्ध होना चाहिए, जिसे 'दिव्य भाव' कहते हैं। केवल योगाभ्यास से वह गति कठिनता से प्राप्त होती है। 'वहाँ' पहुँचने के लिए 'वहाँ' भी पहुँचो। उस गति का नाम है पूर्ण आत्म-समर्पण।

नाम और रूप स्मरण

स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

शास्त्रों में ईश्वर-चिन्तन के जो उपाय बताए गए हैं, उनमें से एक है नाम और दूसरा है रूप। नाम को ही मंत्र कहते हैं, और रूप को मण्डल। हम अपने मन में ईश्वर की छवि को नाम और रूप के माध्यम से ही धारण कर पाते हैं। इन दो तरीकों से हम अपनी चेतना को ईश्वर से जोड़ सकते हैं।

जब मनुष्य मंत्र साधना करता है तब उसके मन से भय का नाश होता है और वह शांत अंत:करण को प्राप्त करता है। जब तक मंत्र की साधना हो रही है, तब तक मनुष्य का मन ईश्वर से जुड़ा रहता है। मतलब उसे ईश्वर का ख्याल बना रहता है। ईश्वर का जो स्मरण है, वह सहज होना चाहिए, उसमें जोर-जबरदस्ती या परेशानी नहीं होनी चाहिए।

जब बेटा दूर देश में पढ़ने के लिए जाता है, तब माता-पिता हमेशा उसी का चिन्तन करते रहते हैं। बेटा अभी पढ़ाई कर रहा होगा, अभी खा रहा होगा, अभी सो रहा होगा, अभी यह कर रहा होगा, अभी वह कर रहा होगा। हर माता-पिता को यह ख्याल आता है, लेकिन ख्याल आते हुए भी माता अपना सब काम करती रहती है। वह अपना काम-काज नहीं छोड़ती, बल्कि जीवन के सभी व्यवहारों को करते हुए अपनी संतान की स्मृति को मन में संजोकर रखती है।

वैसा ही भाव तुम्हें ईश्वर के सम्बन्ध में लाना है। कोई भी काम करो, लेकिन ईश्वर की स्मृति को अपने मन में संजोकर रखो। नाम और रूप ही ईश्वर की स्मृति को अपने मन में स्थापित करने के तरीके हैं। या तो मंत्र बोलो या फिर भगवान की छवि को अपने मानस पटल पर उतारो और उसपर अपना ध्यान केन्द्रित करो।

मंत्र की परिभाषा है– *मननात् त्रायते इति मंत्रः*। जो मन को बंधन से मुक्त कर दे, उस शक्ति को मंत्र कहते हैं। जब मन भोग-विषयों में बंधता है, तब कुछ समय तक मन को विश्राम देने के लिए, भोग-विषयों से मुक्ति के लिए योग में मंत्र की साधना निर्देशित की गई है। भारतीय परम्परा में तो यह भी कहा जाता है कि प्रातःकाल और रात्रि को सोने के पूर्व, हर व्यक्ति को पाँच मिनट बैठकर मंत्र का ख्याल करना चाहिए, जप करना चाहिए, ध्यान करना चाहिए। सबेरे उठते ही सबसे पहले ईश्वर का चिन्तन, ईश्वर की आराधना होनी है। दिन के अंत में जब सोते हो तब भी ईश्वर का स्मरण, ईश्वर का ख्याल होना है। लेकिन हम लोग प्रायः ऐसा नहीं करते। सबेरे उठते ही हमारा ध्यान सीधे संसार से जुड़ता है।

घरों में परम्परा है कि एक किनारे में एक छोटा-सा मन्दिर बना देते हैं और प्रातःकाल वहाँ पर धूप-दीप-अगरबत्ती जला देते हैं, फूल अर्पित कर देते हैं और एक-आध पाठ पढ़ लेते हैं। लोग इसे एक धार्मिक परम्परा मानते हैं, लेकिन हम ऐसा नहीं मानते। यह जीवन का एक व्यवहार है, जिसे अपनाना सबके लिए जरूरी है। सबेरे जब व्यक्ति की नींद खुलती है, उस समय मन तुरन्त जाग्रत अवस्था को नहीं प्राप्त करता। जब तक हम नहा-धोकर अपने आप को तैयार नहीं कर लेते, तब तक हम अर्द्धचेतन अवस्था में रहते हैं। उस अर्द्धचेतन अवस्था में अगर मंत्र किया जाए या एक अच्छा संकल्प लिया जाए, तो वह संकल्प हमारे अवचेतन मन में प्रवेश करके, उसके व्यवहार को सकारात्मक और सात्त्विक बनाता है। फिर हमारा मन एक सकारात्मक ऊर्जा से युक्त होकर, दिनभर की समस्याओं से संघर्ष करने के लिए तैयार हो जाता है।

दिनभर संघर्ष करके रात को सोने के पूर्व, पुनः ईश्वर का चिन्तन करके, मंत्र का जप करके, ईश्वर की छवि पर अपने ध्यान को केन्द्रित करके, मन को तनाव मुक्त करके व्यक्ति निश्चिन्त होकर सो सकता है। नहीं तो चिंता और परेशानी मनुष्य के मन को व्यथित कर देती है और उसकी नींद हराम हो जाती है।

स्वस्थ जीवन की क्या पहचान है? खाने में लक्कड़ हजम, पत्थर हजम और रात को सोते समय तकिये पर सिर रखते ही नींद का आ जाना। बहुत-से लोग बिस्तर पर घण्टों करवट बदलते रहते हैं, नींद ही नहीं आती। जो व्यक्ति रात को देर तक सो नहीं पाता, उसे यह मालूम होना चाहिए कि वह मनोरोग से पीड़ित है, मानसिक रूप से अस्वस्थ है। बिस्तर में सिर रखते ही नींद का

आना हमारे यहाँ मानसिक स्वास्थ्य की निशानी मानी गयी है। इस लक्षण से पता चलता है कि मन चिंताओं और तनावों से मुक्त है। जैसे ही मन शांत होता है, नींद आ जाती है।

ईश्वर का स्मरण, मंत्र का जप, ये मन को तनावमुक्त करने और साथ ही मन को ऊर्जायुक्त करने के बहुत ही सुन्दर उपाय हैं। इसीलिए गीता के छठे अध्याय में श्रीकृष्ण कहते हैं कि शरीर को अचल बना कर, नासिका के अग्र भाग पर दृष्टि जमाकर, इधर-उधर कहीं न देखते हुए, मंत्र या रूप को माध्यम बनाकर अपने मन को मुझमें लगा दो। जब इस प्रकार की स्थिति आ जाती है, तब क्या होता है?

यथा दीपो निवातस्थो नेंगते सोपमा स्मृता।
योगिनो यतचित्तस्य युंजतो योगमात्मनः॥6.19॥

भगवान कहते हैं कि जब इस प्रकार की मनोवस्था प्राप्त कर लोगे, तब तुम्हारे चित्त की वैसी ही स्थिति होगी, जैसे वायुरहित स्थान में स्थित दीपक। उसकी लौ चलायमान नहीं होती, स्थिर रहती है। राग-द्वेष से मुक्त हुआ मन, जिस पर विषयों का प्रभाव नहीं है, वह भी एकदम स्थिर हो जाता है। कोई भी विषय उसे हिला नहीं पाता। ऐसा शांत मन परमात्मा में स्थिर हो जाता है।

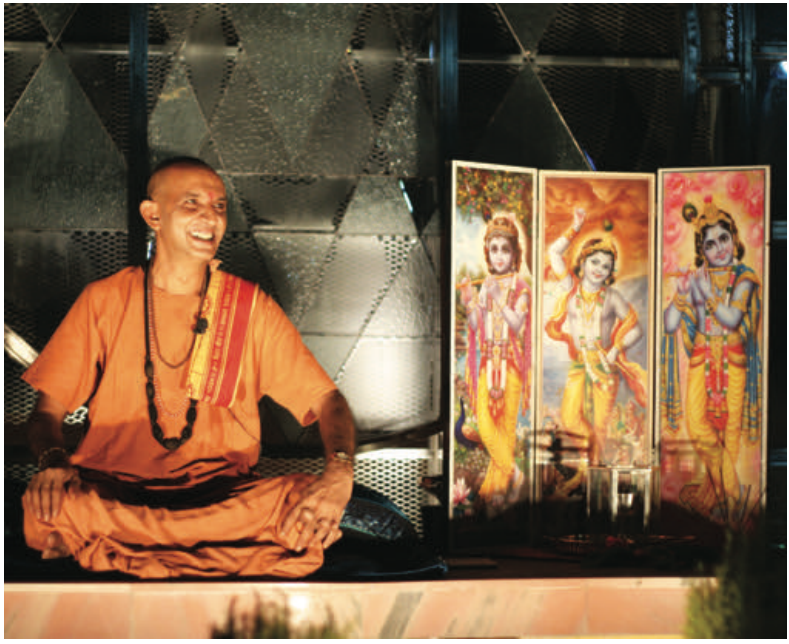

सत्यम् वाणी

हमारा सोचने का तरीका अलग है। हमने जीवन में जो भी काम शुरू किया तो थोड़ी-सी जरूरतों को पूरा करने के लिये किया। पहले हमारा किचन वहाँ था, जहाँ पर टी.वी. लगा है, आठ-दस आदमी का खाना बनाते थे, सब खा लेते थे। उस वक्त हमने यह नहीं सोचा कि सौ आदमी आयेंगे तो कहाँ खायेंगे। हर मनुष्य को बहुत सीमित दायरे में सोचना चाहिये। उससे दिमाग पर गलत असर नहीं पड़ता और निर्णय भी ठीक होते हैं। हमारे निर्णय हमेशा सटीक इसलिये होते हैं कि हम बहुत ज्यादा नहीं सोचते। जैसे-जैसे जरूरत होती है, वैसे-वैसे उसको विकसित करते जाओ। पहले अन्दर कमरे में किचन था, फिर यहाँ आया, फिर वहाँ गया, फिर उस पर टिन शेड लगाया, दस साल में यह पाँचवाँ किचन हम बना रहे हैं। हम तो पहले ही बना सकते थे, क्या हमारा दिमाग नहीं था, हम नहीं जानते थे? जानते थे किन्तु दिमाग पर ज्यादा बोझ नहीं डालना चाहिये। उससे निर्णय चूकता है और निर्णय चूका तो गलतियाँ होंगी।

यही भगवान की रीति है, यही प्रकृति का नियम है। जब बच्चा पैदा होता है तो केवल हगता और मूतता है, काम नहीं कर सकता है। फिर थोड़ा बड़ा होता है तो घुटनों के बल चलता है। ज्यादा नहीं चलता है, उसका शरीर, उसका दिमाग, उसका हृदय, उसके अन्दर के रसायन सब एडजस्ट करते जाते हैं। तब उसके शरीर में विकास शुरू होता है। फिर शरीर या व्यक्तित्व में कोई हादसा नहीं होता। अब तुम्हारे पास पैसा है, बड़ा अस्पताल बना रहे हो, उससे तुम्हारे मन पर जो बोझ पड़ेगा उससे तुम्हारे दिमाग के रसायन फेल कर जायेंगे, क्योंकि तुम्हारा हर विचार तुम्हारे दिमाग के रसायनों और विद्युत-चुम्बकीय परिपथों को प्रभावित करता है। अगर तुम बहुत महत्त्वाकांक्षी हो तो अपने मस्तिष्क के रसायनों की खपत कर रहे हो जो कालान्तर में तुम्हें विषाद और यहाँ तक कि आत्महत्या की ओर ले जा सकता है।

इसीलिए हमारे ऋषि-मुनि कहते थे कि ठीक ढंग से सोचो। हमारे ऋषि-मुनि वह सब जानते थे जो आज अमेरिका और यूरोप के लोग जानते हैं। संहिताओं और अन्य ग्रंथों में सब लिखा है। आयुर्वेद में चिकित्सा शास्त्र के सब रहस्य हैं। रॉकेट इत्यादि सब का विज्ञान लिखा हुआ है। रॉकेट बनाना आता था, बनाया नहीं। अशोक स्तम्भ कैसे बना कि उसमें जंग ही नहीं लगता? आज टाटा स्टील या और कोई इस्पात है जिसमें जंग ही न लगे! यह उस जमाने का विज्ञान था, मगर इन लोगों ने इसको विकसित नहीं किया। मनुष्य को अपनी उन्नति, अपनी महत्त्वाकांक्षाओं को थोड़ा-सा नियंत्रित करना चाहिये। धीरे-धीरे बढ़ोगे तो विकास अवश्य होगा। अब अमेरिका या इंग्लैण्ड में क्या है? उनका बाजार पूरा भर चुका

है। आज अमेरिकन कम्पनियाँ जो माल पैदा कर रही हैं वह अमेरिका में ही खपत नहीं हो रहा, उनको बाहर आना पड़ेगा। बाहर बाजार मिलेगा तो ठीक है, नहीं तो आर्थिक संकट हो जाएगा।

हम यह नहीं सोचते कि रिखिया के लोग आयेंगे, फिर देवघर के लोग आयेंगे, फिर कलकत्ता, बम्बई से लोग आयेंगे। स्वामी सत्यानन्द ऐसा सोचता ही नहीं है। जब हमने मुंगेर में योगाश्रम खोला था तो हमारे पास कमरे ही नहीं थे। सब पुआल बिछाकर हॉल में सोते थे। ऐसा नहीं कि हम कमरे नहीं बना सकते थे। बस, नहीं बनाये। हर चीज में एक बात का ख्याल रखो कि मन पर, भावनाओं पर और कल्पनाओं पर बहुत अधिक स्ट्रेस, बहुत अधिक दबाव न हो। स्ट्रेस का असर मन पर ही नहीं, शरीर पर भी होता है। एक तरह का स्ट्रेस होने पर उससे सम्बन्धित एक रसायन तुम्हारे शरीर के अन्दर गिरता है। अभी हम बोल रहे हैं, तुम सुन रहे हो, समझ रहे हो, यह सब रासायनिक क्रिया है। अगर रसायनों में कहीं कुछ गड़बड़ी हुई तो तुम सुन नहीं सकोगे, तुम समझ नहीं सकोगे, हम बोल नहीं सकेंगे। शरीर के अन्दर हजारों प्रकार के रसायन होते हैं और वे रस काम, क्रोध, लोभ, मोह इत्यादि मानसिक और शारीरिक रोगों को जन्म देते हैं। मानसिक बीमारी तुम्हारे शरीर और मस्तिष्क के रासायनिक क्रियाकलापों का प्रतिफल है। एड्रिनल ग्रंथि की क्रिया बढ़ती है तो भय उत्पन्न होता है। थायरायड ग्रंथि की गतिविधि बढ़ने से शरीर के अन्दर गर्मी आती है।

इसलिये हम ज्यादा नहीं सोचते हैं। यहाँ एक मिट्टी की कुटिया बनाकर रहते हैं। अब सोचा कि नवम्बर में शतचण्डी यज्ञ होता है, लोग आते हैं, गन्दे होटलों में रहते हैं, हजारों रुपया खर्चा करते हैं, यहीं रहेंगे तो अच्छा रहेगा, सस्ता भी रहेगा। यह विचार करके यहाँ एक भवन बनाया और नाम रख दिया क्लिनिक। उसमें धीरे-धीरे सब सुविधायें रखेंगे, गाँव के लोगों को नि:शुल्क उपचार मिल जायेगा। नहीं तो बहुत खर्चा करना पड़ता है, दो-ढाई सौ का बिल आ जाता है। और नवम्बर में 9 दिन आकर यहाँ लोग टिक भी सकेंगे।

हर इन्सान की, हर समाज की, हर धर्म की, हर मुल्क की, हर फूल और पत्ते की, इस सृष्टि में हर एक चीज की एक निश्चित नियति होती है। आदमी का पुरुषार्थ नियति से जुड़ा हुआ है। बिना नियति के पुरुषार्थ नहीं होता है। अब यह चीज समझना भी कठिन है, समझाना भी कठिन है। उसको मानना चाहिये।

ये गाँव में जितने लोग हैं सबकी एक ही नियति है?

देखो, गाँव में लोग गरीब जरूर हैं, मगर गाँव के लोगों को अन्दर में परमात्मा का जो अनुभव होता है, जो विश्वास होता है वह शहर के लोगों में नहीं है। इसके अलावा गाँव के लोग बहुत मजबूत होते हैं। सेना हार जाती है, सरकार बदल जाती

है। उनको रक्षा की पहली पंक्ति कहते हैं, फर्स्ट लाईन ऑफ डिफेन्स। रक्षा की दूसरी पंक्ति समाज और गाँव हैं। इनको जीतना मुश्किल है और इनकी वजह से आज भारत जिन्दा है। वैदिक धर्म और ईश्वर पर विश्वास इनकी वजह से जिन्दा है। ये लोग दार्शनिक होते हैं। ये इतने दु:खी नहीं होते जितने शहर के लोग दु:खी होते हैं। इनका दु:ख तुम देखते हो, इनको नहीं दिखाई देता है क्योंकि ये मस्त रहते हैं। इनके बीच में रहो तो पता चलेगा, वरना नहीं पता चलेगा। हाँ, उनके पास किचन नहीं है, टॉयलेट नहीं है, वह बात दूसरी है। वह भौतिक चीज है।

भारत में आज भी समाज का मुख्य अंग गाँव हैं। गाँव के लोग बिल्कुल अनजान हैं। फिल्म इन्डस्ट्री में क्या हो रहा है, टी.वी. में क्या है, कुछ पता ही नहीं है। सबेरे से लेकर शाम तक बेचारे मजदूरी करते हैं और रात को अपना खा-पीकर सो जाते हैं। जो समय बचता है वह शादी में, बीमारी में और अन्त्येष्टि में चला जाता है। इनको कोई नहीं जीत पाया, न इस्लाम की सभ्यता, न पाश्चात्य सभ्यता।

आज सरकार गाँवों की ओर ज्यादा ध्यान नहीं देती। सरकार की सबसे बड़ी कमजोरी यही है कि वह वहीं पैसा लगाती है जहाँ से पैसा पैदा होता है। अब पेट्रोकेमिकल्स या कोयला में पैसा लगाती है तो पैसा उत्पन्न होता है। मंत्री को भी मिलता है, अफसरों, कर्मचारियों, ठेकेदारों को भी मिलता है, माफिया को भी मिलता है, हर एक को मिलता है। गाँव में यदि पैसा लगायेगी तो पैसा पैदा ही नहीं होगा। कोई भी सरकार कहीं पर भी गाँवों में पैसा नहीं लगाती है। यहाँ तक कि इंग्लैण्ड और अमेरिका में भी।

इंग्लैण्ड और अमेरिका में भी ऐसा ही है?

हाँ, सब जगह गाँव का यही हाल है। एक समान है। गरीबी दुनिया में सब जगह है। जैसे यहाँ देखते हो, बस उन्नीस-बीस का फर्क है। सब जगह गाँवों में ऐसा ही है। हम तो वहाँ के गाँवों में रहते थे, वहाँ बिल्कुल यही हाल है। यह जो पाश्चात्य सभ्यता तुम लोग कहते हो, वहाँ के गाँवों में नहीं है। उनके घर में कोई मर जाए तो एक साल कोई शुभ कर्म नहीं होते। एक साल शादी नहीं होती, काला कपड़ा पहनकर रहते हैं घरों में।

वहाँ जितने भी गाँव हैं, चाहे इंग्लैण्ड के गाँव हों, आयरलैण्ड के गाँव हों या अमेरिका के गाँव हों, सब एक ढंग से सोचते हैं। यह डिस्को डॉन्स, फैशन शो, वगैरह जो कुछ भी हो रहा है, शहरों में होता है। चूँकि आप पढ़ते हो तो समझते हो दुनिया भर में हो रहा है। ऐसा नहीं है। दुनिया की अस्सी प्रतिशत आबादी अपनी जिन्दगी अपने ढंग से जीती है। जो कुछ भी आधुनिक है यह बम्बई, कलकत्ता, दिल्ली या बैंगलोर में है, मगर जैसे ही तुम गाँव में निकलते हो तुम्हें वहाँ भेड़, मुर्गी, सूअर, गाय-बैल ही दिखाई देगा।

मैं विदेश के किसी गाँव जाता था तो वहाँ के लोग समझते थे कि आसमान से गिरकर कोई देवता आया है। ऐसा वहाँ का हाल है। मेरे से मन्त्र लेते थे, दक्षिणा देते थे, मेरे लिये खाना-पीना लाते थे। Yogi from India समझते थे, सोचते थे कि मैं आसमान में उड़ सकता हूँ, आग पैदा कर सकता हूँ! विश्वास उनका गजब का! एक

बार एक लड़की आयी, उसका अपने पति से तलाक करीब-करीब हो चुका था। वह ब्राज़िल की लड़की थी, वापस जाकर तलाक देने वाली थी। वैसे कहीं पर भी औरतें तलाक पसन्द नहीं करती हैं। किसी भी देश में औरत पति को छोड़ना नहीं चाहती है। उनके लिये बहुत बड़ी दुर्घटना है। वह आयी, उसे मन्त्र दिया, वापस गयी, उसका तलाक टल गया। उसने मुझे फोन किया, 'आपका आशीर्वाद मिल गया, मेरा तलाक टल गया, आप ब्राज़िल आइये, मेरे पति को भी चेला बना लीजिये।'

तलाक का प्रावधान जिस तरह इस्लाम या ईसाई धर्म में है, वैसा वैदिक धर्म में नहीं था। हिन्दू कोड में यह चीज लाये, वह ठीक है, कानून रहना चाहिये। हमारे यहाँ पहले केवल अलग होने की प्रथा थी, तलाक की प्रथा नहीं थी। उस कानून से अपने को कोई एतराज नहीं है, मगर दुनिया में उत्तर से लेकर दक्षिण तक लोग तलाक को अच्छा नहीं मानते हैं। अगर तलाक टल जायेगा तो बड़ी खुशी होगी, क्योंकि ईसाई धर्म में भी विवाह की पवित्रता है, इस्लाम, पारसी और यहूदी धर्म में भी विवाह की पवित्रता है। विवाह एक पवित्र सम्बन्ध है जो आजीवन बना रहना चाहिये। यह सब धर्मों की मान्यता है।

देश, काल और वस्तुमयी सृष्टि

हमारी पृथ्वी सौरमण्डल का एक अंग है और यह सौरमण्डल स्थिर नहीं है, अनंत आकाश में तेज गति से चल रहा है। हर दिन इस पर अलग प्रभाव पड़ रहे हैं। इसलिए पृथ्वी पर भी लगातार परिवर्तन हो रहा है, इस पर विभिन्न प्रकार की गुरुत्वाकर्षण और विद्युत-चुम्बकीय शक्तियाँ असर कर रही हैं। दूसरी बात जो बहुत महत्त्वपूर्ण है, एक ग्रह के रूप में पृथ्वी का विकास नहीं, ह्रास हो रहा है। सतयुग और त्रेता युग में पृथ्वी का विकास होता है, द्वापर युग में विकास रुक जाता है और कलियुग में ह्रास शुरू हो जाता है, भौतिक और आध्यात्मिक, दोनों दृष्टियों से। इसका मतलब कि भौतिक स्तर पर पृथ्वी की सृजन शक्ति खत्म हो रही है। सतयुग के समय, मतलब आज से लाखों साल पहले यह पृथ्वी अपने भीतर से डायनासौर, हाथी, घोड़े, मनुष्य, सब पैदा कर सकती थी। पहले डायनासौर नर-मादा के सम्बन्ध से तो नहीं पैदा हुये, वह तो प्राकृतिक सृष्टि हुई। प्राकृतिक सृष्टि का मतलब क्या होता है? पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और आकाश तत्त्वों को समेटने से एक हाथी पैदा हो गया, एक हथनी पैदा हो गयी, एक डायनासौर पैदा हो गया, एक ऊँट पैदा हो गया। वह आज नहीं होता है। केवल मच्छर पैदा होते हैं और एक दिन शायद वे मच्छर भी पैदा न हों।

हमारे यहाँ बोला गया है कि सृष्टि दो तरह की होती है, ब्राह्मी सृष्टि और मैथुनी सृष्टि। अब अण्डे से मच्छर पैदा हो गया तो मैथुनी सृष्टि हो गयी, मगर जो पहला मच्छर पैदा हुआ वह तो ब्राह्मी सृष्टि है। प्रकृति के पाँच तत्त्वों के पंचीकरण

से सारी सृष्टि उत्पन्न हुई है। स्वामी विद्यारण्य की पंचदशी पढ़ोगे तो तुम्हें इस पंचीकरण प्रक्रिया के बारे में मालूम पढ़ेगा। जीव इन्हीं पंचतत्त्वों से पैदा होता है, इन्हीं में मिलता है। इसीलिये कहते हैं, मिट्टी से पैदा हुआ आदमी, मिट्टी से पैदा हुआ जीवन।

इसी तरह से वायु मण्डल भी खाली नहीं है। इसमें अनेकों प्रकार की शक्तियाँ बराबर इधर से उधर आती रहती हैं। एक ग्रह और दूसरे ग्रह के बीच में जो स्थान है उसको कहते हैं अन्तरिक्ष। इस अन्तरिक्ष में अदृश्य शक्तियाँ नित्य निवास करती हैं। यह शास्त्रों में लिखा है और विज्ञान के मुताबिक भी यह आकाश खाली नहीं है। यह अन्य तत्त्वों से भरा पड़ा है। हम बोल रहे हैं, यह ध्वनी कहीं जा रही है। हम सोचते हैं, वह विचार वहाँ जा रहा है। श्वास लेते-छोड़ते हैं, धुआँ पैदा करते हैं, सब वहाँ जा रहा है अन्तरिक्ष में। इसको अगर तुम्हें अच्छी तरह से समझना है तो तुम्हें नक्षत्र विज्ञान और पंचांग विद्या का अध्ययन करना चाहिए। पंचांग विद्या का मतलब समय के पाँच अंगों का ज्ञान। हमारे यहाँ समय को काल बोलते हैं। काल के भीतर ही सभी वस्तुएँ होती हैं, काल ही उनका आधार है। मैं उपनिषदों की बातों को सरल ढंग से बता रहा हूँ। यह सृष्टि काल पर टिकी हुई है। जिस तरह से एक घड़ा किसी आधार पर रहता है उसी तरह से यह सारी सृष्टि काल पर टिकी है। काल ही इसका आधार है और इस काल को हम लोग शिव जी के रूप में देखते हैं। शिव जी का एक रूप है न महाकाल? और उस शक्ति का नाम क्या है? काली।

काल के पाँच मुख्य विभाग होते हैं और उन विभागों को हम लोग पंचांग में देखते हैं। आज सोमवार है, आज सौर चैत्र का दूसरा दिन है, आज कौन-सा नक्षत्र है, वह कितने बजे उदय हुआ, आप लोग सुने होंगे यह सब। उस आधार पर फिर ज्योतिष विद्या आती है। तब उसमें मालूम पड़ेगा यह समय कितनी ठोस चीज है।

काल और वस्तु के बाद तीसरी चीज आती है देश। तुम्हारी पृथ्वी आज इस देश में है, कल लाखों मील आगे चली जाती है। जब मैं पैदा हुआ, जब तुम पैदा हुये, उस दिन पृथ्वी जिस देश में थी आज उस देश में नहीं है। देश का मतलब होता है स्थान। पृथ्वी अपनी धुरी पर घूमती है, सूर्य के चारों ओर भी घूमती है, उसी तरह से सूर्य भी किसी अन्य ग्रह के चारों ओर घूमता है, फिर अपनी धुरी पर भी घूमता है। जब पृथ्वी अपनी धुरी पर एक चक्कर कर लेती है तो दिन और रात हो गया, मगर जब यह पृथ्वी सूर्य का पूरा चक्कर मारती है तो अयन होते हैं, उत्तरायण और दक्षिणायन। उस वक्त यह अलग-अलग स्थानों को पार करती है, जिनको कहते हैं नक्षत्र। उसी तरह से फिर ऋतु बनती है। ऋतुओं से बारह महीने हो गये। उसी तरह से यह सूर्य फिर किसी दूसरे सूर्य का चक्कर लगाता है। उसकी भी बसन्त ऋतु या कुछ होती होगी, क्या मालूम। देश यानि स्थान, काल यानि समय और वस्तु यानि ऑब्जेक्ट, ये तीन चीजें हैं इस सृष्टि में।

स्वामीजी, आप कहा करते हैं कि सब पूर्वनिर्धारित है तो फिर लोग मंदिर क्यों जाते हैं, प्रार्थना क्यों करते हैं?

मंदिर मत जाओ, प्रार्थना मत करो, किसने कहा तुमसे यह सब करने को? लेकिन तुम फिर भी करोगे क्योंकि मजबूर हो। मन ही नहीं मानेगा, आखिर दिनभर क्या करेगा मन? मलूकदास ने कहा भी है–

अजगर करे न चाकरी, पंछी करे न काम।
दास मलूका यह कहे, सबके दाता राम॥

इसका मतलब मंदिर जाने से कोई फायदा नहीं।

मेरे को क्या, वहाँ जाओ तो भी ठीक है, घर में रहो तो भी ठीक है। कहीं तो रहना है। मन्दिर में भी मजे से रहो, घर में भी मजे से रहो। जिन्दा रहने के लिये काम करना ही पड़ता है। काम नहीं होगा तो आदमी विषाद में चला जायेगा, कहेगा जिन्दगी व्यर्थ है, आत्महत्या कर लेगा।

कर्म दार्शनिक सिद्धान्त भी है, जो हमलोगों के यहाँ उपनिषदों और पुराणों में है, साथ ही यह एक वैज्ञानिक सिद्धान्त भी है। चिकित्सा विज्ञान में बोलते हैं कि बीमारियाँ पूर्वनिर्धारित होती हैं। कैसे पता चला कि किसी को कैंसर होगा ही? क्योंकि उसके जेनेटिक सिस्टम में ही ये सब चीजें उनको दिखायी देती हैं। यद्यपि यह विज्ञान पूरा विकसित नहीं हुआ है, मगर जितना हो चुका है उसके आधार पर बड़े-बड़े वैज्ञानिक लोग कहते हैं कि हाँ, बीमारियाँ पूर्वनिर्धारित होती हैं।

जो आदमी अच्छा काम करेगा उसका फल उसको इस जन्म में मिलेगा?

अच्छा या बुरा काम आदमी नहीं करता है, वह तो निमित्त है। आपके चाकू ने मेरा गला काट दिया और इसके चाकू ने किसी का ऑपरेशन कर दिया, उसमें चाकू का क्या दोष? उसमें तो करने वाले का दोष है और करने वाले न तुम हो न मैं हूँ। दु:ख तुमने दिया, सुख तुमने दिया–

सकली तोमारी इच्छा, इच्छामयी तारा तुमि
तोमार कर्म तुमि करो माँ, लोके बाले कारी आमि
करे दाओ माँ ब्रह्म-पद करे करो अधोगामी
आमि जंत्र तुमि जन्त्री, आमि रथ तुमि रथी
जेमन चलाओ तेमनी चली।

हमारा तो यही दर्शन है, तुम भी ऐसा क्यों नहीं सोचते हो? काम करो, नौकरी करो, पैसा कमाओ, खर्चा करो, मेरे को दो, उसको दो, उसके लिये मना नहीं कर रहा हूँ, मैं पुरुषार्थ को नकार नहीं रहा हूँ, मगर पुरुषार्थ मनुष्य अपने ही सन्तोष के लिये करता है, न कि जीवन में कोई परिवर्तन के लिए। पुरुषार्थ तो केवल नाम है। किसके लिये करते हो पुरुषार्थ? पुरुष के लिये, अपने लिये। अपने लिये कर रहे हो, मजा आ रहा है, अच्छा लग रहा है, उसको संस्कृत में कहते हैं पुरुषार्थ। पुरुषार्थ का मतलब प्रयत्न नहीं होता है, वह गलत अनुवाद है। पुरुष के लिये जो किया जाता है वह पुरुषार्थ है। तुम्हारे अन्दर जो बैठा है, जिसको सुख होता है, दु:ख होता है, हर्ष होता है, सन्तोष होता है, उसके लिये तुम कर रहे हो। यह पुरुष आखिर कौन है?

बँगला खूब बना महाराज, जिसमें नारायण बोले।
इस बँगले में दस दरवाजे, बीच पवन का खंभा,
आवत-जावत कोऊ नहीं देखा, यही एक अचम्भा।
एक अचम्भा हमने देखा, नारी पुरुष का जोड़ा,
कहत कबीर सुनो भई साधो, जिन जोड़ा तिन तोड़ा।

वह पुरुष ऊपर से नीचे और नीचे से ऊपर जाता है, पर किसी को दिखाई नहीं देता है। आगे कबीरदास जी कहते हैं कि इस बंगले में एक और अचम्भा है, एक नारी-पुरुष का जोड़ा। जो इस नारी और पुरुष को जोड़ देता है, वही उसको पाता है।

इस बंगले के अन्दर जो जीवात्मा रहता है वह पुरुष है। तुम जो कुछ भी कर रहे हो उस जीवात्मा के लिये कर रहे हो, उसकी खुशी के लिये कर रहे हो, अपनी नियति को बदलने के लिये नहीं कर रहे हो। नियति तो एक ऐसा कानून है कि हम-तुम जैसे चार फुट के आदमी क्या बदलेंगे। आखिर हमारी क्या हैसियत है इस

ब्रह्माण्ड में? इस विशाल, अनन्त ब्रह्माण्ड में एक सूर्य है, जिसका एक ग्रह पृथ्वी है, उसमें एशिया महाद्वीप है जिसमें हिन्दुस्तान एक देश है, उसमें एक बिहार राज्य है जिसमें एक शहर देवघर है जिसमें एक गाँव पनियापगार है। उसमें एक मकान है जिसमें एक छोटा-सा आदमी स्वामी सत्यानन्द है और वह कहता है मैं कर्त्ता हूँ! अब तुम उस लम्बे नक्शे में देखो तुम्हें एक बिन्दु भी देखने को नहीं मिलेगा। यह तुच्छ-सा जीव इतनी बड़ी-बड़ी बातें कैसे करता है?

हमने बहुत पहले सोचा लिया था कि देखो सत्यानन्द, तुम्हें जो कुछ मिलने वाला है, वह जरूर मिलेगा और जो खोना होगा वह खोना पड़ेगा। जो नाम मिलेगा, मिलेगा, जो बदनामी मिलेगी, मिलेगी, जो स्वास्थ्य मिलेगा, मिलेगा, जो बीमारी मिलेगी, मिलेगी। तुम उसकी चिन्ता मत करो, वह तो तुमको मिलना ही है। अब रह गया बाकी समय, किसी तरह से टाईम पास करो। थोड़ा मूँगफली खा लो, थोड़ा अखबार पढ़ लो, थोड़ा टी.वी. देख लो, नौकरी कर लो, शादी कर लो, बाल-बच्चे पैदा कर लो, समय निकल जायेगा किसी तरह से। सिर्फ टाईम पास करो, इस जीवन के विषय में ज्यादा गम्भीर मत रहो क्योंकि कोई है जो नियति को नियंत्रित कर रहा है। जैसे कुत्ते को मालिक जंजीर से बाँधकर ले जाता है, इधर-उधर जाने से उसको खींचता है, उसी तरह से अब तुम कुत्ते हो, मालिक कोई और है।

यह मेरी ही फिलासफी नहीं है, सब संत-महात्मा तो यी कहते हैं। ईसा मसीह, मुहम्मद साहब, गुरु नानक, सब तो यही कहते थे। संत-महात्माओं पर भरोसा न हो तो अच्छे-अच्छे वैज्ञानिकों के लेख पढ़ो, आईन्स्टाईन ने क्या कहा था, मैक्स प्लैंक ने क्या कहा था? जिन बड़े-बड़े वैज्ञानिकों ने दुनिया में क्रान्ति लाई, उनका क्या कहना है? वे एक ही बात बोलते हैं—एक बहुत बड़ी सत्ता है और वही सत्ता सारी सृष्टि का संचालन करती है।

स्त्री जाति का उत्थान

स्त्री जाति की उन्नति स्त्री जाति ही कर सकती है। पुरुष स्त्री जाति का उत्थान नहीं कर सकता, क्योंकि स्त्री के सोचने का तरीका, उसकी भावनाएँ पुरुष से अलग होती हैं। उसकी पसंद, उसकी प्राथमिकता आदमी से अलग होती है। केवल यहाँ नहीं, अमेरिका जाओ, जर्मनी जाओ, औरतों का मूल स्वभाव वही है। सब जगह एक तरह है। पढ़ी-लिखी लड़कियों का भी मानसिक और भावनात्मक ढाँचा एक-सा ही होता है। उन्हें कोई भी दूसरी भाषा थोड़ा-सा भी पढ़ाने से उनके दिमाग में, उनके व्यक्तित्व में परिवर्तन आता है। अगर अंग्रेजी पढ़ने वाली हो तो हिन्दी या संस्कृत पढ़े। हर भाषा का मनुष्य के मन पर अलग-अलग असर पड़ता है। भाषा मनुष्य के व्यक्तित्व को प्रभावित करती है।

यहाँ पहले-पहले छोटी लड़कियों को स्वामी निर्मलरत्ना अंग्रेजी पढ़ाती थी तो तीन-चार आने लग गयीं। एक लड़की दिनभर दरवाजे पर खड़ी रहती थी, स्वामी सत्संगी बाहर जाती तो कहती हमको भी सीखना है। हमने कहा, इसको ससुराल जाकर गोबर ही तो उठाना है, मिट्टी तो उठानी है, ईंटा तो उठाना है, वह अंग्रेजी सीखकर क्या करेगी? मगर नहीं, यहाँ की लड़कियाँ अंग्रेजी सीखना चाहती हैं, उनके माता-पिता उनको सिखाना चाहते हैं। यह हमारे देश का नया मनोविज्ञान है, नया बैरोमीटर है। गाँव के माता-पिता अपनी बच्चियों को, जिनका प्रारब्ध बर्तन मांजना, कपड़ा धोना, गोबर उठाना, बच्चा पैदा करना ही है, अंग्रेजी सिखाना चाहते हैं। यह आज हमारे समाज का बैरोमीटर है। यदि आज हम व्यवस्था ठीक कर सकें, और भी शिक्षक ला सकें तो सैकड़ों लड़कियाँ आयेंगी। हमारे पास आवेदन-पत्र तो ढाई सौ थे। ढाई सौ में से हमने केवल बीस को चुना। हमने कहा, धीरे-धीरे शुरू करो। जब देखेंगे कि इन लोगों में इच्छा है तो शिक्षक भी आ जायेंगे, हमारे पास शिक्षकों की कोई कमी तो है नहीं।

मगर हमारा लक्ष्य अंग्रेजी नहीं है, वह तो चारा है। हमारा लक्ष्य है कि इन लोगों को ऊँची चीजों के बारे में, उच्च दर्शन के बारे में सोचना चाहिये। शादी करना, बच्चा पैदा करना, घर चलाना, पैसा कमाना, चाय-भाजी बनाना, यह तो मजबूरी है, सबको करना पड़ता है, मगर यह जीवन का लक्ष्य नहीं हो सकता। जीवन का

लक्ष्य है ज्ञान की प्राप्ति, तत्त्व चिन्तन, ईश्वर और सृष्टि के बारे में सोचना—यह काम मनुष्य ही कर सकता है, कुत्ता, बिल्ली, हाथी, वगैरह यह काम नहीं कर सकते। केवल मनुष्य ही ज्ञान का चिन्तन कर सकता है, ईश्वर पर बात कर सकता है। ईश्वर नहीं है, यह भी बोल सकता है और ईश्वर है, यह भी बोल सकता है। पूजा-पाठ कर सकता है, रामायण पढ़ सकता है, जन्म-पुनर्जन्म के बारे में सोच सकता है। और तो कोई नहीं कर सकता है न? जब मनुष्य के अन्दर यह क्षमता आ गई है तो उसका उपयोग करना चाहिए न? खाना बनाओ, कपड़ा धोओ, शादी करो, बच्चा पैदा करो—यह करना ही पड़ेगा, यह मानने को हम तैयार हैं, किन्तु यह जीवन का लक्ष्य नहीं हो सकता। तुम इसलिये पैदा नहीं हुये हो।

हमारे पूर्वज बन्दर थे, ऐसा डार्विन बोलता है, मगर किसी भी बन्दर को आरती करते या तुलसी-पूजा करते या शिवलिंग का अभिषेक करते या मन्त्र जपते देखा है क्या? हम तो नहीं मानते कि बन्दर हमारे बाप-दादा थे, मनुष्य ने सीधे जन्म लिया है। भगवान ने मनुष्य को पैदा किया है, उसने प्रयोग किया है कि कोई ऐसा प्राणी हो जो कम-से-कम मेरी जय-जयकार तो बोले। भगवान ने सब प्राणी पैदा किये, मगर कोई उसको याद नहीं करता। कुत्ता-बिल्ली, हाथी-घोड़ा, पतंग-मातंग सब तैयार किया, मगर पैदा करने के बाद उन्होंने सलाम भी नहीं किया। भगवान ने सोचा, अब ऐसा कोई जीव पैदा करें जो कम-से-कम कहे 'श्री राम जी की जय'। तब उसने मनुष्य को पैदा किया, और क्या पैदा किया कि लो! बनाने वाले को ही भूल गया। अब बेटी की तरफ देखता है, बेटे की तरफ देखता है, दादा-परदादा, नाती-पोती सबको देखता है, मगर भगवान का नाम याद नहीं आता। जब कुछ आफत आ जाती है तो देवघर वगैरह जाकर फल-फूल चढ़ा देता है। माने भगवान की वही भूमिका है कि जब दिक्कत आए तो चले जाओ। गलत बात बोली क्या?

मनुष्य को भगवान का ज्ञान हुआ। यह मनुष्य की विशेषता है, पर मनुष्य ने इस विशेषता का फायदा नहीं उठाया। मनुष्य के लिये भगवान का भजन, आध्यात्मिक जीवन मुख्य विषय नहीं रह गया, उसके लिये प्रधान विषय है शादी-ब्याह बस। जो मुख्य विषय था वह गौण हो गया। भगवद्-चिन्तन, आध्यात्मिक जीवन हमलोगों के लिये वैकल्पिक विषय हो गया और सांसारिक जीवन अनिवार्य। जबकि अनिवार्य तो अध्यात्म होना चाहिये।

मनुष्य ईश्वर से विमुख क्यों होता है?

शुरू से ही मनुष्य ईश्वर से दूर होते गया है। अंग्रेजी में शब्द आता है religion, re का मतलब होता है दुबारा, ligion का मतलब होता है बांधना। जैसे गाँठ बाँधी जाती है न, जुड़ना, तो religion का मतलब दुबारा जुड़ना। इसका मतलब यह हुआ कि तुम पहले एक ही थे, भगवान में ही थे। भगवान के साथ तुम्हारा सम्बन्ध

था, बन्धन था, तुम छूट गये, अब दुबारा जोड़ो। Religion का मतलब मजहब नहीं होता है, बल्कि इसका मतलब होता है पुनर्योग, पुनर्सम्बन्ध। प्रथम सम्बन्ध क्या है? भगवान ने हमें बनाया, हम भगवान के अन्दर हैं, भगवान और हम एक हैं। अज्ञान की वजह से हम हट गये, दूर चले गये तो किसी ने आकर दुबारा भगवान का ख्याल कराना शुरू कर दिया, और तुम दुबारा जुड़ गये।

वेदों और उपनिषदों में यह प्रश्न बहुत आया है—क्या वजह है कि जीवात्मा जो परमात्मा का अपना स्वरूप है, मनुष्य जो परमात्मा का औरस पुत्र है, इनके बीच सम्बन्ध-विच्छेद क्यों हो गया? जीवात्मा परमात्मा से हटकर माया की तरफ क्यों जाने लगा? उसका यह स्वभाव क्यों है? यह आज का प्रश्न नहीं है, यह तो हजारों साल पूछा गया है। जब परमात्मा मेरे अन्दर है, जब परमात्मा मेरा जन्मदाता है तो फिर मैं मनुष्य प्रपंच की तरफ क्यों गया? कुत्ते और सूअर की तरह विष्ठा क्यों खाना? जिन चीजों से तुम जानते हो दु:ख मिलता है, परेशानी होती है, उन्हें ही क्यों पकड़कर रखते हो?

सांख्य शास्त्र में इसका कारण बतलाते हैं। कहते हैं कि जब पुरुष और प्रकृति का संयोग हुआ तब सृष्टि की उत्पत्ति हुई, जीव की उत्पत्ति हुई। यदि पुरुष और प्रकृति का मिलन नहीं होता तो जीव की उत्पत्ति नहीं होती। तब परमात्मा निराकार, निर्लेप, अजन्मा, एकान्त में एक जगह बैठा रहता। *एकोऽहं*, मैं एक हूँ, ऐसा सोचकर शून्य निराकार में रहता। उपनिषद् कहता है कि एक बार की बात है, परमात्मा के मन में संकल्प उठा *एकोऽहं बहुस्याम:*—मैं एक से बहुत हो जाऊँ, प्रजा पैदा करूँ। तब

उसके आगे कहानी आती है, कैसे अण्डा फूटा, चौपाये कैसे बने, फिर दोपाये कैसे बने, कीट-पतंग-मातंग, चौरासी लाख योनियाँ जो बोलते हो न, ये कैसे बनीं। पुरुष और प्रकृति चने के दो फाँक जैसे हैं जिनके बीच से अंकुर निकलता है। अगर दोनों फाँकों को अलग रखोगे तो अंकुर नहीं निकलेगा। उसी तरह पुरुष-प्रकृति के योग से सृष्टि पैदा होती है, और पुरुष-प्रकृति को अलग किया जाए तो सृष्टि का नाश। कबीरदासजी का जो पद बोला था न, *'एक अचम्भा हमने देखा, नारी पुरुष का जोड़ा। कहत कबीर सुनो भई साधो, जिन जोड़ा तिन तोड़ा।'* यहाँ जोड़ने का मतलब होता है ध्यान योग, और तोड़ने का मतलब होता है पुरुष को प्रकृति से अलग करना। ध्यान के द्वारा पुरुष और प्रकृति को अलग किया जाता है। प्रकृति का मतलब होता है पदार्थ और पुरुष का मतलब होता है चेतना।

प्रकृति को और समझाते हैं। प्रकृति कोई औरत नहीं है, एक तत्त्व है। प्रकृति त्रिगुणात्मिका होती है—सत्त्वगुण, रजोगुण और तमोगुण से युक्त। पुरुष इन तीन गुणों का आश्रय लेकर सृष्टि को पैदा करता है। जब तुम या हम पैदा हुये तो इन तीन गुणों को लेकर पैदा हुये हैं। आखिर सन्तान में माँ का अंश तो आयेगा ही। माँ प्रकृति और पिता पुरुष, तो हममें प्रकृति से तीन गुण आये—तमोगुण, रजोगुण और सत्त्वगुण। हम सब लोग रजोगुण और तमोगुण प्रधान जीव हैं, इसलिये हमलोग हमेशा बाहर की तरफ जाते हैं, यद्यपि परमात्मा के अंग हैं।

रामचरितमानस में इस बात को और भी अच्छी तरह से समझाया है। वहाँ श्रीराम का पूरा जन्म इसी प्रश्न का उत्तर है। सीता का हरण, रावण का मरण, समुद्र भ्रमण, दशरथ की तीन रानियाँ, चार पुत्र, वनवास, सीता-विवाह, धनुष-यज्ञ, यह सब उसी प्रश्न का उत्तर है जो तुमने पूछा है। जीवात्मा बन्धन में क्यों पड़ा है? क्यों माया उसको हरकर ले जाती है? क्यों रावण सीता को हरकर ले जाता है और किस तरह से उस जीवात्मा सीता का उद्धार होता है? रावण आखिर कौन है? अरे, रावण दस सिर वाला आदमी है, तुम भी हो दस सिर वाले। पाँच कर्मेन्द्रियाँ, पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, दस हो गये। तुम दुनिया का जितना ज्ञान प्राप्त करते हो, जितना भोग भोगते हो, दस इन्द्रियों से ही तो भोगते हो न? खाना-पीना, सोना-जागना, आदान-प्रदान, यह दस इन्द्रियों से ही तो अनुभव हो रहा है न? रावण तो तुम हो, क्या फर्क है। हर इन्द्रिय की दो वृत्तियाँ होती हैं, दस इन्द्रियों की कितनी हुईं? बीस, इसलिए रावण के बीस हाथ हैं। वह सब कुछ जानते हुए भी सीता को हरकर ले आया। मनुष्य भी अपनी इन्द्रियों के वशीभूत होने से ये सब काम करता है, और राम जी की सीता को हर लेता है। रामचरितमानस मनुष्य के तमाम प्रश्नों का उत्तर है। भक्ति के प्रश्नों का भी और ज्ञान के प्रश्नों का भी।

—23 मार्च 1998, रिखियापीठ

योग एवं स्वास्थ्य

संन्यासी ज्ञानसिन्धु, पटना

योग के सम्बन्ध में सामान्यतया कुछ भ्रांतियाँ हैं। आम लोग कदाचित यह मानते हैं कि योग साधु-संतों या संन्यासियों के लिए ही है और कहीं योग का अभ्यास करने से वैराग्य भाव तो उत्पन्न नहीं हो जाता? वैराग्य का सामान्य अर्थ लोग यह समझते हैं कि योग साधना से ऐसा भाव उत्पन्न होने पर लोग घर-द्वार छोड़कर चले जाएँगे। वास्तव में ऐसी बात नहीं है। योग एक सम्पूर्ण विज्ञान है। क्या आपने कभी यह सोचा है कि विज्ञान का लाभ केवल उन्हें ही मिलता है जिन्होंने इसका अन्वेषण किया? न्यूटन, आइन्सटाइन या जेम्स वॉट सदृश अन्वेषकों ने जो वैज्ञानिक लाभ समाज को दिये उससे क्या उनकी जाति या उनके धर्म के अनुयायियों को ही लाभ मिले? नहीं, आज सारा विश्व उन खोजों से लाभान्वित है।

उसी प्रकार यह सच है कि योग के निरूपण, उसकी व्याख्या तथा क्रियात्मक पक्षों को योगियों, संतों, महर्षियों और संन्यासियों ने जाँच-परख कर आम जनों के लिए सुलभ बनाया। लेकिन आज उसकी आवश्यकता वैरागियों या संतों-संन्यासियों से कहीं अधिक आम जनों को है। जिन संतों-महर्षियों ने इसे सामान्य लोगों के लिए प्रचारित-प्रसारित किया, वास्तव में उन्हें स्वयं तो उसकी आवश्यकता कतई नहीं थी। वे तो जन-जन के कल्याण की भावना से ओत-प्रोत होकर वर्षों की तपस्या, कभी-कभी तो कई पीढ़ियों के अन्वेषण के पश्चात् योग के सिद्धान्तों और उसके व्यावहारिक तत्त्वों को लोगों तक लाए, और यही कारण है कि आज योग को पाश्चात्य देशों में जो मान्यता और आदर प्राप्त है वह उसके मूल स्थान, अपने देश में नहीं ही है। हाँ, पुरातन काल में निश्चित रूप से यह जन-जन के जीवन का अंग था और अधिकांश लोग इससे लाभान्वित होते थे।

यह निर्विवाद है कि योगियों से अधिक भोगियों को योग की आवश्यकता है। यहाँ 'भोग' शब्द का नकारात्मक अर्थ न समझें। आखिर आपने अपने जीवन में जो भी अर्थ, काम, धर्म या मोक्ष की परिकल्पना की है उसके लिए स्वस्थ तन, संतुलित मन एवं उन्नत चेतनावस्था की आवश्यकता तो है ही। उसके लिए योग से बढ़कर अन्य कोई महौषधि नहीं और वह भी बिना खर्च एवं बिना किसी 'साइड-इफेक्ट' के।

योग साधना के पूर्व अपने तन-मन को एक लय में लाने हेतु कुछ आसन एवं प्राणायाम सिद्ध करने आवश्यक होते हैं। प्रत्येक व्यक्ति की आवश्कयता और उपलब्ध समय के अनुसार कुशल योग प्रशिक्षक इसका निर्णय लेते हैं। लेकिन कुछ सामान्य आसन सबके लिए उपयोगी हैं। सात-आठ वर्ष के बच्चों से लेकर

सत्तर-अस्सी वर्ष के वृद्ध पवनमुक्तासन समूह के आसन कर सकते हैं। जोड़ों को मुक्त रखने के लिए और वात, गठिया, पाचन विकार आदि से मुक्ति के लिए तो ये बेजोड़ आसन हैं। मैं एक उदाहरण देना चाहूँगा अपने एक परिचित व्यक्ति का जो एक सफल उद्योगपति हैं। उम्र सत्तर वर्ष के लगभग है। पीठ दर्द से बेहद परेशान रहते थे। आधे घंटे बैठ सकने और चलने में भी अपार कष्ट होता था। पटना से दिल्ली तक के और कुछ विदेशी चिकित्सकों से भी सलाह ली, दवा खाई, उपचार कराया और अंततोगत्वा सबका परामर्श था कि इंग्लैंड जाकर ऑपरेशन करा लें अन्यथा अपाहिज की भाँति जीना पड़ सकता है। उस स्थिति में वे एक कुशल योग प्रशिक्षक की शरण में आए और कुछ दिनों के उपयुक्त योगाभ्यास के बाद आज वे पूर्णतया भले-चंगे हैं और योग को एक नवजीवनदायिनी शक्ति के रूप में स्वीकार करते हुए प्रतिदिन नियमित योगाभ्यास करते हैं।

अक्सर पूछा जाता है कि हम कौन-से अभ्यास ओर कब करें? जैसा ऊपर कहा गया है कि अपनी-अपनी आवश्यकताओं और सीमाओं के अन्दर ही एक कुशल योग प्रशिक्षक आपको उपयुक्त सुझाव देंगे। इस सम्बन्ध में बिहार योग विद्यालय, मुंगेर के परमाचार्य स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति के लिए उनका SWAN सिद्धान्त बड़ा सटीक है। इसमें 'एस' से 'स्ट्रेंथ', 'डब्लू' से 'वीकनेस', 'ए' से 'एम्बीशन' तथा 'एन' से 'नीड' निरूपित है। हमारी शक्ति, कमजोरी, आकांक्षा एवं आवश्यकता बड़े महत्त्वपूर्ण हैं। इसी के अनुरूप हमें अपने जीवन में योगाभ्यास सहित सभी कृत्य करने चाहिए।

एक बालक या बालिका के मामले में ये चारों तत्त्व, एक शिक्षक, प्रशिक्षु, युवा, वृद्ध या साधक की तुलना में भिन्न-भिन्न हो सकते हैं। किसी कामकाजी पुरुष या महिला की आवश्यकताएँ एवं उनको उपलब्ध समय भी भिन्न होंगे। किसी रोगग्रस्त व्यक्ति के मामले में ये और भी भिन्न होंगे। यहाँ यदि मैं यह कहूँ कि 30-45 मिनट का समय दे सकने की क्षमता रखनेवालों के लिए 15 मिनट का आसन, 15 मिनट का प्राणायाम एवं 15 मिनट योग निद्रा का अभ्यास कराया जाए तो सभी कोटि के लोगों को लाभ मिलेगा तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। हाँ, ख्याल रहे कि योगाभ्यास सबेरे कुछ खाने के पूर्व या फिर भोजन के कुछ घंटे पश्चात् जब पेट खाली हो तभी करना उचित है। बच्चों के लिए ताड़ासन, तिर्यक् ताड़ासन एवं सूर्य नमस्कार के आसन; नाड़ी शोधन एवं भ्रामरी प्राणायाम, ॐ का उच्चारण तथा त्राटक का अभ्यास काफी लाभदायक हैं। प्राचीन काल में जब पठन-पाठन-लेखन सामग्रियों का अभाव था तो श्रुति और स्मृति की क्षमता का विस्तार इन्हीं अभ्यासों के बल पर संभव हुआ था। यह आज भले अविश्वसनीय लगे, लेकिन हमारी परम्परा के वेद, उपनिषद, पुराण आदि हजारों ग्रंथ वास्तव में सुनकर और स्मृतियों में संजोकर ही आनेवाली पीढ़ियों को उक्त अभ्यासों

के बल पर प्राप्त हो सके। इन अभ्यासों से 'पीनियल ग्रंथि', जिसे योगी आज्ञा चक्र कहते हैं, जागृत करने में सहायता मिलती है और यही वह ग्रंथि है जो हमारी बुद्धि एवं स्मृति की वृद्धि कर सकता है।

आम लोगों के मन में अक्सर यह शंका उत्पन्न होती है कि योग का प्रशिक्षण कहाँ से प्राप्त करें। योग के विश्वव्यापी महत्त्व के मद्देनजर कई नकलचियों और अधकचरे योग प्रशिक्षकों की भरमार हो गई है। योग को व्यावसायिक बनाने वाले भी प्रशिक्षण देने का कार्य करने लगे हैं। संतुलित, सकारात्मक एवं सक्रिय जीवन जीने के लिए योग एक महत्त्वपूर्ण विद्या है, लेकिन इसका प्रशिक्षण किसी सुयोग्य प्रशिक्षक से ही लेना चाहिए। योगाभ्यास करनेवालों को इस मूल मंत्र का ध्यान रखना चाहिए कि योग कोई तिलिस्म नहीं। इसके अभ्यासी के लिए संकल्प शक्ति आवश्यक है और नियमित अभ्यासी न केवल समस्त रोगों को नियंत्रित कर सकते हैं, बल्कि जो रोगी नहीं हैं वे रोगमुक्त दीर्घ जीवन जीने में सक्षम हो सकते हैं। अधिकांश मनोकायिक रोगों यथा दमा, उच्च रक्तचाप, मधुमेह, अवसाद, गठिया, आदि का योगाभ्यास से निश्चित निदान संभव है। इन रोगों से निजात पाने के लिए योगाभ्यास द्वारा अभ्यासी के अन्दर प्रतिरोधक शक्तियाँ उत्पन्न होती हैं। यही इसका वैज्ञानिक पक्ष है। परन्तु इसके लिए यह आवश्यक है कि किसी सुयोग्य प्रशिक्षक से सीखकर पूरी संकल्प शक्ति के साथ नियमित अभ्यास किया जाए। एक बार यदि किसी अभ्यासी ने इसका आनन्द लेना शुरू कर लिया तो वह बिना योगाभ्यास किए अपनी दैनिकचर्या शुरू ही नहीं कर सकता। यही योग का लक्ष्य और वही उसका परिणाम भी है।

योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट

सत्यम् गाथा–ऋषि की प्रशस्ति

पृष्ठ 40

श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती तथा श्री स्वामी सत्यानन्द सरस्वती को समर्पित सत्यम् गाथाएँ उनकी आध्यात्मिक एवं यौगिक शिक्षाओं को सरल, रोचक ढंग से दुनियाभर के लोगों तक पहुँचाने का माध्यम हैं।

सन् 2017 में स्वामी निरंजनानन्द जी योगक्षेत्र में उत्कृष्ट सेवाओं के लिए पद्मभूषण सम्मान से अलंकृत हुए। मुंगेर में आयोजित सम्मान समारोह में बाल योग मित्र मण्डल के बच्चों ने स्वामीजी के प्रति भावभीनी श्रद्धांजलियाँ अर्पित कीं। इस गाथा में इन्हीं बच्चों की आपबीतियाँ और अनुभूतियाँ संकलित हैं जिनसे स्वामीजी के बालसुलभ चरित्र के अतिरिक्त उनकी एक बहुत बड़ी कृति भी उजागर होती है–हजारों-लाखों बच्चों के जीवन में संस्कार, स्वावलम्बन और राष्ट्र-संस्कृति-प्रेम का बीजारोपण।

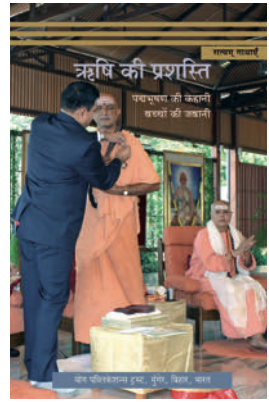

उपलब्ध

पुस्तकों की मूल्य सूची एवं क्रयादेश प्रपत्र प्राप्त करने के लिए सम्पर्क करें–
योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, गरुड विष्णु, पी.ओ. गंगा दर्शन, फोर्ट, मुंगेर, बिहार 811201
दूरभाष : 91-6344-222430, 6344-228603 फैक्स : 91-6344-220169

जवाब के लिए अपना पता लिखा, डाकटिकट लगा लिफाफा भेजें, अन्यथा आपके आवेदन पर विचार नहीं किया जाएगा।

वेबसाइट और एप्प

SATYANANDA YOGA
BIHAR YOGA

www.biharyoga.net

बिहार योग पद्धति की मुख्य वेबसाइट पर सत्यानन्द योग, बिहार योग विद्यालय, बिहार योग भारती तथा योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट संबंधी जानकारियाँ उपलब्ध हैं।

सत्यम् योग प्रसाद

www.satyamyogaprasad.net वेबसाइट पर तथा Android एवं iOS उपकरणों पर एप्प के रूप में उपलब्ध
मुंगेर योग संगोष्ठी 2018 के अवसर पर स्वामी सत्यानन्द जी एवं स्वामी निरंजनानन्द जी की समस्त प्रकाशित कृतियाँ ऑनलाइन प्रस्तुत की जा रही हैं।

बिहार योग विकी

www.yogawiki.org
मुंगेर योग संगोष्ठी 2018 के अवसर पर ऑनलाइन विश्वकोश प्रस्तुत किया जा रहा है जहाँ सभी साधकों के लिए यौगिक शिक्षाएँ सुगम रूप में उपलब्ध होंगी।

योगा एवं योगविद्या ऑनलाइन

www.biharyoga.net/bihar-school-of-yoga/yoga-magazines/
www.biharyoga.net/bihar-school-of-yoga/yogavidya/
योगा एवं योगविद्या पत्रिकाएँ Android एवं iOS उपकरणों पर एप्प के रूप में भी उपलब्ध हैं।

अन्य एप्प (Android एवं iOS उपकरणों के लिए)

- योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट की लोकप्रिय पुस्तक, *ए.पी.एम.बी.* अब सुविधाजनक एप्प के रूप में उपलब्ध है।
- *बिहार योग एप्प* साधकों के लिए प्राचीन और नवीन यौगिक ज्ञान आधुनिक ढंग से पहुँचाता है।

- Registered with the Department of Post, India
  Under No. MGR-01/2017
  Office of posting: Ganga Darshan TSO
  Date of posting: 1st-7th of every month
- Registered with the Registrar of Newspapers, India
  Under No. BIHHIN/2002/6306

issn 0972-5725

योगपीठ कार्यक्रम एवं योग विद्या प्रशिक्षण 2019

अप्रैल 2-6	योग जीवनशैली कैप्सूल (हिन्दी/अंग्रेजी)
अप्रैल 22-28	हठ योग यात्रा 1 एवं 2
मई 13-19	हठ योग यात्रा 3 एवं 4
जून 2-6	योग जीवनशैली कैप्सूल (हिन्दी/अंग्रेजी)
अगस्त 16-22	राज योग यात्रा 1 एवं 2
अगस्त 23-29	राज योग यात्रा 3 एवं 4
अक्टूबर 1-30	बिहार योग शिक्षकों के लिए प्रगतिशील प्रशिक्षण 1, 2 (अंग्रेजी)
अक्टूबर 1- जनवरी 25	चातुर्मासिक योग अध्ययन (अंग्रेजी)
नवम्बर 4-10	क्रिया योग यात्रा 1 एवं 2
नवम्बर 11-17	क्रिया योग यात्रा 3
दिसम्बर 18-22	योग चक्र शृंखला (अंग्रेजी)
दिसम्बर 25	स्वामी सत्यानन्द जन्मदिवस
प्रत्येक शनिवार	महामृत्युंजय हवन
प्रत्येक एकादशी	भगवद् गीता पाठ
प्रत्येक पूर्णिमा	सुन्दरकाण्ड पाठ
प्रत्येक 4, 5 एवं 6 तारीख	गुरु भक्ति योग
प्रत्येक 12 तारीख	अखण्ड रामचरितमानस पाठ

आश्रम में मोबाइल फोन लाना वर्जित है। अपना मोबाइल फोन कदापि अपने साथ न लाएँ।

उपर्युक्त सत्रों/ कार्यक्रमों के सम्बन्ध में विशेष जानकारी के लिए सम्पर्क करें–
बिहार योग विद्यालय, गंगादर्शन, फोर्ट, मुंगेर, बिहार 811201
फोन : 06344-222430, 06344-228603 फैक्स : 06344-220169
वेबसाइट : www.biharyoga.net **कार्यक्रमों एवं प्रशिक्षणों के आवेदन-पत्र यहाँ उपलब्ध हैं**
✉ अन्य किसी जानकारी हेतु अपना पता लिखा और डाक टिकट लगा हुआ लिफाफा भेजें, जिसके बिना उत्तर नहीं दिया जायेगा।